(गीताञ्जली धारा.....9)

समीक्षा-गीताञ्जली

-सिद्धान्त चक्रवर्ती, कविवराचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव

-: पुण्य स्मरण बेला :-

चतुःसंघों-1. आचार्यवर श्री कनकनन्दी जी स्वसंघ, 2. आचार्यश्री पद्मनन्दी जी गुरुदेव ससंघ, 3. आचार्यश्री सुकुमालनन्दी जी ससंघ, 4. मुनिश्री तरुणसागर जी ससंघ के परस्पर वात्सल्य मिलन, चर्चा-वार्ता, काव्य-पाठ, गोष्ठी, गीताञ्जली विमोचन, स्वाध्याय, प्रवचन आदि की पुण्य बेला के शुभ अवसर पर।

-: स्वैच्छिक द्रव्य दान :-

आचार्यश्री पद्मनन्दी जी संघस्था ब्रह्मचारिणी द्वय 1. अञ्जू दीदी, 2. अर्चना दीदी के स्वैच्छिक अर्थ सहयोग से

ग्रंथांक-207 प्रतियाँ-1000

संस्करण-2012 मूल्य-31/- रु.

(गीताञ्जली धारा-9 की रचना 22.12.2011 रात्रि 9 से 16.1.2012 रात्रि 1.27 तक में हुई)

-: सम्पर्क सूत्र :-

डॉ. नारायणलाल कछारा, सचिव, धर्म-दर्शन सेवा संस्थान,

55, रवीन्द्रनगर, उदयपुर (राज.)-313001

फोन नं. (0294) 2491422, मो. 9214460622

E-mail:nlkachhara@yahoo.com

-: प्राप्ति स्थान :-

धर्म दर्शन सेवा संस्थान, द्वारा-श्री छोटूलाल जी चित्तौड़ा

चन्द्रप्रभ दि. जैन मन्दिर आयड़, आयड़ बस स्टॉप के पास,

उदयपुर (राज.)-313001, मो. 9783216418

आचार्य वन्दना

तुभ्यं नमः परम शांत मुनीश्वराय, तुभ्यं नमः परम धर्म समर्थकाय।
श्री आदि सिन्धु यतिवर्य नमोस्तु तुभ्यं, तुभ्यं नमः सकल सत्व हितंकराय ॥

संसार नीरनिधि तारण यानपात्रं, शिष्य प्रबोध निपुणं चरतीर्थ तुल्यम्।
भव्याङ्गि नेत्र कुमुदा कर कौमदीशं श्री शांतिसागर महर्षि महं नमामि ॥

स्वाद्वाद नायक मुनीन्द्र महाप्रवीणं, विद्या विशारद गणी सुनिमित्त तज्ञ।
नाना कला सुनिपुणं सुतपस्विनं च, वन्दे सदा यतिवरं महावीर कीर्तिम् ॥

आचार्यवर्य मभयं सरलं सुशांत, सर्वोपकारि शुभकार्य रत मुनीशम्।
वात्सल्य मूर्तिं भुविभव्य सरोज बंधो, श्री कुन्थुसागर मणीन्द्र महं नमामि ॥

आचार्य रत्नमचलं गुणसागरं च, स्वाध्याय कर्मणिरतं परमं प्रशान्तम्।
गम्भीर सिंधु तमनाशक भास्करं, वन्दे सदा कनकनन्दी यतीन्द्र नित्यम् ॥

शान्तं प्रसन्न वदनं तपसः स्वरूपम्, स्वाध्याय पाठ निरतं मुनिसंघ मान्यम्।
जैनागमादि श्रुति शास्त्रयुतं वरेण्यम्, आचार्य पद्मगुरु-देव महं नमामि ॥

साधु नमामि दुरितं ननु संहरामि, साधु स्मरामि सुगति परिवर्द्धयामि।
साधु महामि भवतामधिकं जहामि, साधु धरामि हृदये शिवतां च यामि।

आचार्यश्री कनकनन्दी जी गुरुदेव की विशेषता

वन्द्य चरण जिनके

प्रस्तुति-मुनि सुविज्ञसागर

तर्ज : ज्योति कलश छलके..... नीले गगन के तले.....

वन्द्य चरण जिनके.....2

जिनके सन्मुख विश्व हुआ है, नतमस्तक मन से.....

वन्द्य चरण जिनके.....2

अध्यातम की ज्योति जलाएँ, धर्म-दर्श-विज्ञान मिलाएँ घट-घट में सबके.....2

वन्द्य चरण जिनके.....

हिन्दू-मुस्लिम-सिक्ख-ईसाई, दिक् श्वेताम्बर जैनी भाई आकर शोध करें.....2

वन्द्य चरण जिनके.....

देश-विदेश में जाकर प्रतिनिधि, गुरुवर का अभियान प्रचारें भावे तन-मन से.....2

वन्द्य चरण जिनके.....

वैश्विक दृष्टि सब अपनाएँ, ऐसी भावना है गुरुवर की 'सुविज्ञ' कहे मन से.....2

वन्द्य चरण जिनके.....

दि. 5.12.2010

कनकनन्दी गुरुदेव के श्री चरणों में

1. पतित पावन नाम है, कनकनन्दी गुरुदेव।
   सत साहित्य से कर रहे मानवता की सेव ॥
2. सत्य अहिंसा प्रेम का देते नित संदेश।
   त्याग दिये सब आवरण धारा मुनिवर भेष ॥
3. धर्म और विज्ञान की करते नित नव शोध।
   अनेकांत के वाद का देते नित उद्‌बोध ॥
4. भिन्न-भिन्न भाषाओं पर है जिनका अधिकार।
   हर भाषा में कर रहे सत्-साहित्य प्रसार ॥
5. सर्वधर्म समभाव की करते रहते बात।
   मानवता ही धर्म है नहीं जात और पात ॥
6. कटु सत्य से कर रहे निश दिन सब पर चोट।
   जो भी इनकी शरण गया मिटी भरम की खोट ॥
7. मातृ हृदय है आपका पिता तुल्य व्यवहार।

बालक जिनके अनुयायी करते इन्हें दुलार ॥

8. एक मुँह दस हाथ से लिखते रहते ग्रंथ।

निर्मोही निर्मल सरल परम सनेही संत ॥

9. गंगा सम आवेग है सागर सम गंभीर।

बाहुबली से वीर हैं महावीर सम धीर ॥

10. दिवाकर का श्री गुरुवर को कोटी-कोटी प्रणाम्।

निर्भय पद देवे सदा सफल होवे सब काम ॥

(दिवाकर त्रिवेदी, ऋषभदेव, जिला-उदयपुर, मो. 9414976598

दि. 06.12.2011

गुरु-शिष्यों (साधु-संघों) का वात्सल्य-मिलन

आचार्य श्री कनकनन्दी जी

चौपाई :

गुरु-शिष्य मिलन जब भी होते, आनन्दाश्रु तब हैं बहते।
विनय समाचार भक्ति होते, परस्पर आदान-प्रदान होते॥1॥
आगन्तुक मुनि का स्वागत करते, लेने हेतु कुछ दूर जाते।
परस्पर जब मिलन होता, वात्सल्य भाव उमड़ आता॥2॥
ज्येष्ठ गुरु की परिक्रमा देते, त्रिभक्ति सह नमन (नमोऽस्तु) करते।
परस्पर भी गले मिलते, भक्त जन जय-जय करते॥3॥
ज्येष्ठ गुरु को आगे करके, स्वागत आगमन होता सभी के।
प्यारे बच्चों को आनन्द होता, सज्जन मन पुलकित होता॥4॥
मंगल बाजा खूब बजते, धार्मिक नैतिक नारे लगते।
धार्मिक भजन गीत गाते, मंगल कलश सिर पे लेते॥5॥
पुष्प वृष्टि भी भक्त करते, पाद प्रक्षालन गुरु के करते।

ग्राम नगर में आनन्द छाता,
मंगल उत्सव सर्वत्र होता॥6॥

जिनमन्दिर में मुनिसंघ आता,
जिन दर्श से निज दर्शन होता।

तीन परिक्रमा युक्त (भक्ति) वन्दन,
मुनिसंघ करता त्रियोग वन्दन॥7॥

प्रवचन गुरुदेवों के होते,
सत्य तथ्य का बखान करते।

मोक्षमार्ग को प्रगट करते,
भव्य कमलों को विकसित करते॥8॥

वसतिका में साधु संघ आता,
प्रवास हेतु निवास होता।

स्वच्छ एकान्त पावन स्थल में,
श्रमणों का षट्कर्म होता॥9॥

आर्यिका पृथक् निवास करती,
स्वाध्याय हेतु गुरु पास आती।

प्रतिक्रमण सह प्रायश्चित्त लेती,
अन्यथा पृथक् निवास करती॥10॥

शौच क्रिया हेतु दूर (जंगल) जाते,
एकान्त प्रासुक स्थान में जाते।

विशेष परिस्थिति के लिए,
निकट में शौचालय होते॥11॥

आहार समय जब आता,
प्रासुक जल श्रावक लाता।

सर्व मुनिसंघ शुद्धि करता,
मन्दिर जाकर दर्शन करता॥12॥

ज्येष्ठ गुरु की प्रदक्षिणा देता,
आहार त्याग निष्ठापन होता।

भक्ति सहित मौन धरते,
अनुक्रम से चर्या पे जाते॥13॥

नवधा भक्ति से प्रतिग्रहण होता,
श्रावक मन प्रमुदित होता।

सप्तगुण युक्त आहार देते,
स्वर्ग मोक्षार्थे पुण्य कमाते॥14॥

आहार अनन्तर श्रीसंघ मिलता,
भक्ति सह प्रत्याख्यान करता।

परस्पर समाचार करते,
सामायिक ध्यान सब करते॥15॥

सुख-दुःख समाचार करते,
स्वाध्याय वैयावृत्ति करते।

आवश्यक उपकरण भी देते,
वात्सल्य भाव से चर्चा करते॥16॥

दीक्षा-शिक्षा विहार-आहार,
रत्नत्रय व स्वास्थ्य कुशल।

चातुर्मास व अनुभव सकल,
परस्पर चर्चा करते सफल॥17॥

आनन्दमय समय बीतता,
विहार होने का समय आता।

सर्वसंघ सह विहार करते,
प्रभावनार्थे पृथक् भी होते॥18॥

पृथक् विहार जो संघ करता, छोड़ने हेतु अन्य संघ जाता।
समाचार विधि से विदाई करते, पुनः मिलन के भाव भी धरते॥19॥
इसी से ज्ञान अनुभव बढ़ता, सातिशय पुण्य का बन्ध होता।
वात्सल्य सहयोग संगठन होता, जनगण को शुभ सन्देश जाता॥20॥
चारों (पाँचों) दान श्रावक करता, सेवा व्यवस्था में समय देता।
कुछ भव्यों को सम्यक्त्व होता, निकट भव्य भी साधु बनता॥21॥
धर्म प्रभावना महती होती, ज्ञान गंगा की धारा बहती।
संघ मिलन का यह स्वरूप कनकनन्दी को भाया यह रूप॥22॥

टोकर, 15.1.2012 (मकर संक्रान्ति), प्रातः 8.52

(पुण्य स्मरण-आचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव ससंघ, मुनिश्री तरुणसागर जी ससंघ, आचार्यश्री पद्मनन्दी जी ससंघ एवं आचार्यश्री सुकुमालनन्दी जी ससंघ के वात्सल्य मिलन की पुण्य बेला में)।

मेरे अनुभव के गवाक्ष से

मेरे दीक्षा गुरु आचार्य कुन्थुसागर जी तथा शिक्षा गुरु आचार्य कनकनन्दी जी

-आ. पद्मनन्दी

प.पू. गणधराचार्य कुन्थुसागर जी महाराज, गणिनी आर्यिका विजयमती माताजी तथा क्षुल्लक कनकनन्दी महाराज के संघ में छिंदवाड़ा निवासी श्रावक सुरेश कुमार का सन् 1979 में प्रवेश हुआ। मैं संघ के साथ पैदल गमन करता था। मैंने आचार्यश्री से मुक्तागिरि सिद्ध क्षेत्र में सप्तम प्रतिमा के व्रत धारण किये। वैराग्य पथ पर आरूढ़ हो, जीवन का नया अध्याय प्रारम्भ हुआ। चौका भी साथ चलता था। संघ में छत में चंदोवा लगाना परम आवश्यक था। जिन्होंने विधवा विवाह या विजातीय विवाह किया, उस पूरे परिवार से आहार नहीं लेते थे।

समाधि सम्राट आचार्य महावीरकीर्ति जी महाराज से संस्कारित विजयमती माताजी धर्म के प्रति आस्थावान् और महाविदूषी थी। 1980 में अकलूज चातुर्मास हुआ। वहाँ से श्रवणबेलगोला की ओर यात्रा प्रारम्भ हुई। कर्नाटक में प्रवेश होने के साथ ही आचार्यश्री, आर्यिकाश्री एवं क्षुल्लकश्री ने पूर्ण प्रयास से कन्नड़ भाषा सीख ली। मात्र भाषा ज्ञान ही नहीं, अपितु वहाँ का रहन-सहन, विचारधारा आदि से भी परिचय प्राप्त किया। इसी तरह विहार करते समय जब भी पाठशाला में रुकने का अवसर आता, तब शिक्षा सम्बन्धी चर्चा शिक्षकों से अवश्य कर लिया करते थे।

भगवान् बाहुबली के मस्तकाभिषेक को निहार कर नयनों को पवित्र करने साधु वर्ग उपस्थित हुए। हमारा सौभाग्य ही था कि आ. देशभूषण जी महाराज, आ. विमलसागर जी महाराज, आ. सुमतिसागर जी महाराज, ऐलाचार्य विद्यानन्द जी महाराज आदि अनेक साधुसंघ का दर्शन लाभ हुआ। प्रतिदिन स्वाध्याय होता था, उसी बीच क्षु. कनकनन्दी जी महाराज करीब 200 साधुओं के मध्य नाना प्रकार की जिज्ञासाओं को वैज्ञानिक दृष्टि से समाधान करते थे, बड़ा ही आनन्द आता था। उसी मंच पर 5 फरवरी को क्षु. आदिसागर जी मुनि दीक्षा लेकर वीरनन्दी जी बनें, क्षु. कनकनन्दी जी महाव्रती मुनि कनकनन्दी जी बनें। इसी तरह दीक्षा लेकर ब्र. सुरेश क्षु. पद्मनन्दी जी, ब्र. मुलायम क्षु. देवनन्दी जी तथा क्षु. कुलभूषण-आर्यिका कुलभूषण नाम के धारी हुए। इन साधुओं सहित ग. कुन्थुसागर जी महाराज के संघ का अनुशासन विशेष था, श्रावकों से सम्पर्क का निषेध था। आचार्यश्री पूरे संघ का निरीक्षण करते हुए स्वाध्याय करवाते थे। एक बार पञ्चामृत-अभिषेक का प्रकरण आया।

चूँकि हमारे क्षेत्रजन्य मध्यप्रदेश के वे संस्कार थे, जो मन्दिरों में पञ्चामृत-अभिषेक के विरोधी थे। न हमने कभी जानना चाहा, न ही पढ़ा। तब आचार्यश्री ने पद्मपुराण, हरिवंशपुराण, वसुनन्दी श्रावकाचार आदि ग्रन्थों के प्रमाण प्रस्तुत किये। पुनः यह कहकर भी समझाया कि मात्र जल का अभिषेक करते है वह भी उस पञ्चामृत से ही लिया गया है तथा इस विचारधारा वाले पण्डितों अथवा

अन्यजनों से प्रमाण ज्ञात कर लेना, किन्तु बहुत प्रयत्न करने पर भी कहीं उपलब्ध नहीं हुआ। तब आचार्यश्री ने बड़े ही स्नेह और वात्सल्य से बतलाया कि आगम में यही एक आज्ञा है। इसे अभिषेक से पूर्व ही अमृत कहा गया है। तिलोयपण्णत्ती में वर्णन है कि प्रलयकाल के समय जमीन भी जलकर भस्म हो जाती, तब इन्हीं पदार्थों अर्थात् जल, रस, दूध आदि-आदि की अमृत वर्षा से भूमि पर शान्ति, शीतलता व हरियाली आती है। तभी से आत्म संतुष्टि के साथ आगम पर अटूट श्रद्धा हो गयी। यह भी परम सत्य है कि जो प्रतिदिन पञ्चामृत-अभिषेक करता है उसके जीवन की नाना प्रकार की अशान्ति अर्थात् शारीरिक, मानसिक इत्यादि अनेक प्रकार की आपत्तियाँ नष्ट हो जाती हैं। प.पू. आचार्यश्री का महान् उपकार ही है, हमें अनन्त संसार से निकालकर व्रत-संयम देकर एवं आगम ज्ञान कराकर हमारा उपकार किया, उद्धार किया तथा कनकनन्दी महाराज जी ने तो आगम के प्रति निष्ठा उत्पन्न कर हमारा जीवन ही बदल दिया।

आ. विमलसागर जी महाराज, उपाध्याय भरतसागर जी महाराज, ऐलाचार्य विद्यानन्द जी महाराज जैसे शिक्षा-दीक्षा में वृद्ध साधु भी जब मुनि कनकनन्दी जी महाराज से शास्त्र-चर्चा करते और वैज्ञानिक दृष्टि से आगम स्पष्ट रूप से समझते थे तब हमारा मन भी गद्गद् हो जाता कि पूर्व पुण्य का ही उदय था, जो हमें इनकी शरण में ले आया। यहाँ तक कि सभी साधु आचार्यश्री से भी कहने लगे आप बहुत ही उत्कृष्ट कोटि का हीरा ढूँढ़कर लाये हैं।

विराजे संघसहित हासन चातुर्मास में, क्षु. पद्मनन्दी जी व क्षु. देवनन्दी जी की मुनि दीक्षा 31 मार्च, 1982 को हुई। ज्ञान के क्षयोपशम को देखते हुए अध्यापन तथा अध्ययनरत मुनि कनकनन्दी जी महाराज को आचार्यश्री ने 25 नवम्बर, 1982 के शुभ अवसर पर उपाध्याय पद से अलंकृत किया, भट्टारक जी भी वहीं विद्यमान थे। संघ में उसी समय नियम बन गया कि कोई भी साधु चंदा-चिट्ठा नहीं करेंगे।

वहाँ से विहार कर जिस ग्राम या नगरी पहुँचते आचार्यश्री व उपाध्यायश्री सर्वप्रथम श्रावकों को नवधा भक्ति का महत्त्व बताते हुए दान देने के संस्कार अवश्य प्रदान करते। संघस्थ सभी साधुओं को बाह्य चकाचौंध से दूर रहने के उपदेश देते, स्वाध्याय के माध्यम से वैराग्य वृद्धि करते, दुःख स्वरूप संसार के बंधन से मुक्त होने के उपाय बताते हुए बार-बार यही समझाते कि सत्य को खोजों, जानों, उस पर श्रद्धान करो उसी में आत्मकल्याण है। ग्रंथों के प्रमाण दिये, यथाः वसुनन्दी श्रावकाचार, (जै. कोश भाग 2, पृ. 78)-पूजा अभिषेकपूर्वक ही की जाती है। यदि महिलायें अभिषेक नहीं करती तो पूजा का एक अंग कम हो जायेगा। पूजा के मुख्य अंग-(1) अभिषेक, (2) आह्वानन, (3) स्थापन, (4) सन्निधिकरण, (5) अष्ट द्रव्य से पूजन, विसर्जन।

साधुओं को भी निर्देश दिया है कि अभिषेक देखते समय सिद्धभक्ति, चैत्यभक्ति, पंचगुरुभक्ति, शांतिभक्ति पढ़नी चाहिए। (कोश भाग 2, पृ. 138)।

जयधवला पृ. 91-कषायपाहुड़-वीरसेन आचार्यकृत टीका 9वीं शताब्दी-

दाणंपूजा सीलमुववासो चेदि चउव्विहो सावय धम्मो। एसो चउव्विहो वि छाज्जीव णिराहओ, पयणपायणग्गिसधुक्खण-जालण, सूदि-सूदाणादि वावारेहिजीव विराहणाए विणा दाणाणुवत्तीदो। तरुवरछिंदण-छिंदावणिट्ठपादण-पादावण तद्दहण-दहावणादिवावारेण छज्जीव विराहणहेउणा विणा जिणभवण कदणकदावण-ण्णहणुववत्तीदो। ण्हवणोवलेवण संमज्जण-छुहावण-फुल्लारोहण-धूवदहणादि-वावारेहि जीववहाविणाभावीहि विणा पूजकरणावत्तीदो च।

अर्थ : दान, पूजा, शील और उपवास ये चार श्रावक के धर्म हैं। यह चारों ही प्रकार का श्रावक का धर्म छह काय के जीवों की विराधना का कारण है। क्योंकि भोजन का पकाना, दूसरे से पकवाना, अग्नि का जलाना, सुलगाना, बुझाना आदि व्यापारों से होने वाली जीव विराधना के बिना दान नहीं बन सकता। उसी प्रकार वृक्ष का काटना और कटवाना, ईंट बनाना आदि ये छह

काय की विराधना के कारणभूत व्यापार के बिना जिनभवन का निर्माण करना, करवाना नहीं बन सकता है तथा अभिषेक, अवलेप, संमार्जन करना, चंदन लगाना, फूल चढ़ाना, धूप का जलाना आदि जीववध के अविनाभावी व्यापारों के बिना पूजा नहीं हो सकती है।

इसके समाधान में समन्तभद्राचार्य वासुपूज्य भगवान् की स्तुति में कहते हैं-

''सावद्य-लेशो बहु-पुण्य-राशौ'' इन सबमें अल्प सावद्य क्रिया है और पुण्य लाभ अधिक है। शेष यदि विशेष जानना है तो ''कालातीत सत्य'' और ''जिनअर्चना'' आदि पुस्तकों से पढ़ें। पूजा में हिंसा तो है, परन्तु यहाँ आरम्भी हिंसा है, जिसका श्रावक का त्याग नहीं है। यदि वह सोचता है कि कम से कम हिंसा करेंगे तो उस पाप से बच जायेंगे, लेकिन पाप का त्याग किये बिना उसका आस्रव निरंतर हो रहा है तथा विपरीत श्रद्धान करना मिथ्यात्व है, मिथ्यात्व से बड़ा और कोई पाप नहीं।

जल से अभिषेक करने से उसमें जलकायिक असंख्यात जीवों का घात होता है। उसे विशेष प्रासुक करने गर्म किया तो असंख्यात अग्निकायिक जीवों का घात होता है। जबकि दूध से अभिषेक करने में किसी भी प्रकार की हिंसा नहीं है। पुष्प न चढ़ाकर पीले चावल चढ़ाते है वहाँ भी चावल की उत्पत्ति में महान् हिंसा हुई, वह भी वनस्पति जीव का शरीर ही है, यह कभी क्यों नहीं सोचा। उसी प्रकार यदि पुष्प में हिंसा है तो पीले चावल में पुष्प स्थापना की हिंसा क्यों नहीं? यही तो विपरीत श्रद्धान हो गया। जैसे मुर्गा चढ़ाने में हिंसा है, किन्तु आटे का मुर्गा चढ़ाने में यशोधर राजा ने हिंसा नहीं मानी, इसी कारण तो उसकी अनेक भवों तक दुर्गति होती रही। इसी प्रकार की स्थिति हमारी हो जायेगी, संसार का किनारा नहीं आयेगा। जैन धर्म में अहिंसा धर्म को स्याद्वाद के अभाव में नहीं समझा सकता है। अष्टद्रव्य में पुष्प का विधान भगवन्तों, गणधरों, आचार्य

परमेष्ठी द्वारा ही किया गया है। इसे पढ़ा नहीं, समझा नहीं, यही तो अज्ञानता का लक्षण है।

संघस्थ ब्र. दीदी को अभिषेक करते देख मुझे आश्चर्य हुआ, आचार्यश्री मेरे मन की बात को भाँप गये। कहा कि अशुद्धि के सिवाय अन्य समय में जरूर करती हैं और उस मासिक अशुद्धि में स्त्रियाँ न तो मन्दिर में प्रवेश करती हैं, न जिनवाणी का अध्ययन करती हैं, न ही चौका लगाकर साधुओं को आहार दान करती हैं। जब शुद्धि में पूजा कर सकती है तो अभिषेक क्यों नहीं? अन्य को महिलाओं से ही विरोध है, इसीलिए न तो 12-13 वर्ष के पहले, न ही 50 वर्ष के बाद करने देते हैं, यही अज्ञानता का सूचक है। दूसरी बात यदि अभिषेक करने में ब्र. में दोष लगता है तो पंचकल्याणक के समय कैसे स्पर्श करते हैं? उसी प्रकार जन्मकल्याणक के समय तो अभिषेक करती हैं। आगम में अनेक उदाहरण दिये हैं और तो और हर महिला साधु के पाद-प्रक्षालन तो अवश्य करती है तब भगवान् का अभिषेक करने में क्या दोष है? मात्र पंथवाद के प्रभाव में न आकर आगम का भली प्रकार से अध्ययन करना चाहिए। जैसे-(8वीं शताब्दी-हरिवंशपुराण, सर्ग 22, गाथा 20-21)-

इत्युक्तो नोदयद्वेगा, सारथि रथमाप सः। जिनवेश्म तमास्थाप्य तौ प्रविष्टौ प्रदक्षिणो ॥20॥

क्षीरक्षुरसधारोधैः धृतदध्युदकादिभिः। अभिषिंच्य जिन्द्रार्यामार्चिताम् नृसुरासुरैः॥21॥

अर्थ : गन्धर्व सेना के ऐसे वचन सुनते ही सारथी ने रथ हाँक दिया और मन्दिर के पास जाकर खड़ा किया। रथ से उतरकर कुमार और गन्धर्व सेना ने जिनालय में प्रवेश कर भगवान् की तीन प्रदक्षिणा दी, तथा दूध, ईख का रस, घी, दही और जल से भगवान् का अभिषेक किया।

इसी प्रकार पद्मपुराण में रविषेणाचार्यकृत पर्व 89, श्लोक 15-16 तथा उत्तरपुराण और जिनदत्तचरित्र, श्रीगुणभद्राचार्य, आत्मानुशासन सर्ग 1, श्लोक 55-56 में देख लें।

जल से अभिषेक करते समय-

दूरावनम्र सुरनाथ किरीटकोटि संलग्न रत्न किरणच्छविधूसरांघ्रिम्।

प्रस्वेदतापमलमुक्तमपिप्रकृष्टै र्भक्तया जलैर्जिनपतिं बहुधाभिषिंचे॥

यह श्लोक पूज्यपाद आचार्य रचित पञ्चामृताभिषेक का ही है, तब एक श्लोक को ग्रहण कर अन्य क्यों छोड़ दिये?

आचार्यश्री ने इस प्रकार समझा-समझाकर सही मार्ग हमें दर्शाया। पुनः आचार्यश्री ने पूछा आप जो अभिषेक करते है वह अरिहंत अवस्था का है या जन्मकल्याणक का?

मैंने सहज ही उत्तर दिया-अरिहंत प्रतिमा का अभिषेक करते हैं। पुनः प्रश्न उठा क्या अरिहंत का अभिषेक होता है? मैंने उत्तर दिया-अरिहंत का तो नहीं किन्तु मूर्ति का अभिषेक जरूर करते हैं। पुनः आचार्यश्री ने प्रश्न किया-उस मूर्ति को किस पर विराजमान करके अभिषेक करते हैं? उत्तर-

यः पांडुकामाल शिलागतमादिदेवमस्थापन् सुरवराः सुरशैलमूर्ध्नि।

कल्याणमीप्सुहमक्षततोयपुष्पैः, संभावयामिपुरएवतदीय बिम्बम्॥

जब अरिहंत भगवान पृथ्वी से पाँच हजार धनुष ऊँचे रहते हैं, फिर पांडुक शिला पर क्यों विराजमान करते हो? तथा स्वयं को इन्द्र की कल्पना करके 'इन्द्रोऽहं' क्यों कहते हो? इससे सिद्ध हुआ कि प्रतिदिन पांडुकशिला पर विराजमान करके जो अभिषेक करते हैं वह जन्मकल्याणक का ही प्रतीक है।

उसी प्रकार अष्टद्रव्य से पूजन करने का विधान है-

अष्टद्रव्य की पूजा में आरम्भजनित पाप लग रहा है। पानी छानना, चावल

चढ़ाना, पुष्प चढ़ाना, नैवेद्य बनाना आदि में असंख्यात जीवों का घात होने पर भी उसे एक बूँद के पाप के समान बताया है और द्रव्य चढ़ाने से महान् पुण्य जो समुद्र के समान विशाल बताया है। पुष्प पर जो जीव दिखते है उसे पृथक् कर सकते है, साथ ही हमारे परिणाम जीवघात के हैं नहीं, अतः हमें मात्र आरम्भजनित हिंसा का ही पाप लगेगा। यदि पाप ही होता तो ''कामबाण विध्वंसनाय'' कहकर पाप नष्ट के लिए क्यों कहते? इसलिए सत्य को स्वीकार करोगे तो मिथ्यात्व का दोष नहीं लगेगा। उसी तरह यदि नैवेद्य (विविध व्यंजन) चढ़ाने से चींटी आती है तो चटक, चावल आदि में भी आ सकती है। ये मात्र बहाने है। अच्छी तरह जान लें कि इन द्रव्यों को चढ़ाकर हम भगवान् की आज्ञा का पालन कर रहे हैं। धर्मध्यान का सबसे पहला पाया आज्ञाविचय धर्मध्यान है। यदि उससे विपरीत चिंतन, मनन और आचरण कर रहे हैं तो भगवान की आज्ञा का लोप होता है।

सभी ग्रंथों में इसके प्रमाण मिलते हैं उसे पढ़ना चाहिए।

पद्मपुराण, पर्व 17, फूलों से पूजा-

जिनपूजानयोग्यानि पंकजानि सरस्सुहि। विद्यन्ते तव वक्त्रस्य धारयन्ति समानताम् ॥286॥

तालाबों में जिनेन्द्र देव की पूजा करने के योग्य जो कमल खिल रहे हैं वे तुम्हारे मुख की समानता धारण करते हैं॥

प्रतिमां च प्रवेश्यैनां पूर्वदेशे व्यतिष्ठयत्। आनर्च च विचित्राभिः सुमनोभिः सुगन्धिभिः॥93॥

अर्हन्त भगवान की प्रतिमा को उसने (कनकोदरी) पूर्व स्थान पर विराजमान कराया और नाना प्रकार के सुगन्धित फूलों से उसकी पूजा की॥

नैवेद्य चढ़ाने का फल-पद्मनन्दी पञ्चविंशति में पद्मनन्दी आचार्य कहते हैं-

देवोयमन्द्रियबलं प्रलयं करोति, नैवेद्यमिन्द्रियबलप्रदखाद्यमेतत्।

चित्रंतथापि पुरतःस्थितमर्हतोऽस्य, शोभंबिभतिं जगतो नयनोत्सवाय॥5॥

अर्थ : यह श्री जिनेन्द्र देव तो समस्त इन्द्रियों के बल को नष्ट करते हैं और यह नैवेद्य इन्द्रियों के बल को बढ़ाने वाला है तथा खाने योग्य है तो भी श्री अर्हन्त भगवान के सामने चढ़ाया हुआ यह नैवेद्य समस्त जगत के नेत्रों के उत्सव के लिये शोभा को धारण करता है, यह आश्चर्य है।

इस तरह अनेक ग्रंथों से, प्रकरणों से, उदाहरणों से उपाध्याय कनकनन्दी जी महाराज सप्रमाण प्रस्तुतीकरण करते थे। आगम में दृढ़ श्रद्धान करवाया। चारों अनुयोगों को खूब अध्ययन करवाया। अनेकान्त, स्याद्वाद, तर्क, युक्ति, आगम आदि के द्वारा समीचीन ज्ञान प्रदान करते हुए सतत् चारित्र में वृद्धि होती रहे, वैराग्य बढ़ता रहे, अनुशासन बना रहे, आत्मानुशासन के द्वारा आत्मोन्नति करते रहे, यही प्रयास करते हुए हम सभी साधुओं को ज्ञान-दान दिया।

पुनः तुमकूर में प्रभावना युक्त चातुर्मास करके शमनेवाड़ी (कर्नाटक) में 1985 में वर्षायोग स्थापन किया। उपाध्यायश्री ने ऐसे महान् ग्रंथों का अध्ययन हमें कराया, जिसे अन्य कोई नहीं करा सकता था। एक बार धवला की वाचना हो रही थी, उनके पठन-पाठन और ज्ञान को देखकर आचार्य देशभूषण जी महाराज के ससंघ सान्निध्य में तथा लगभग बीस हजार श्रद्धालु श्रावकों के मध्य उपाध्यायश्री को, प.पू. आचार्यश्री कुन्थुसागर जी महाराज ने स्वहस्तों से ''सिद्धान्त चक्रवर्ती'' की पदवी से सम्मानित किया। यह देख पूरा संघ नतमस्तक हो गया।

जैन सिद्धान्त के मूल अनेकान्त और स्याद्वाद को विरले ही जीव समझ पाते हैं उन्हें अनेकों उदाहरणों, परिभाषाओं द्वारा संघस्थ साधुओं को हृदयंगम करवाया। रहस्योद्घाटन किया कि द्रव्य अनेकान्तस्वरूप हैं क्योंकि द्रव्य में अनेक गुण व पर्यायें पाई जाती हैं। अर्थात् द्रव्य को समझने के लिये अनेकान्त का सहारा लेना होता है। जैसे-पुद्गल द्रव्य है, प्रत्येक क्षण क्षीण हो रहा है तथा

उसमें स्पर्श, रस, गंध, वर्ण गुण होते हुए भी भिन्न हैं अर्थात् स्पर्श गुण रस नहीं है, रस गंध गुण नहीं है, गंध गुण वर्ण नहीं है, इसे अनेकान्त से ही समझा जा सकता है, अतः अनेकान्त सर्व व्याप्त है। जहाँ-जहाँ द्रव्य पाये जाते हैं वहाँ अनेकान्त है। इस अनेकान्त को समझने के लिए स्याद्वाद का सहारा लेना होता है।

स्याद्वाद क्या है? कथन करने की शैली को स्याद्वाद कहते हैं। ऐसे-ऐसे सूक्ष्म रहस्य को उपाध्याय कनकनन्दी जी महाराज व आचार्यश्री अच्छी तरह समझाते। कई बार महाराज जी स्याद्वाद शैली से समझाते थे। अनेक भाषाओं तथा गणित, विज्ञान के विशिष्ट ज्ञान के द्वारा पढ़ाकर, समझाकर व प्रश्नों के समाधान कर सबको संतुष्ट और आनंदित कर देते थे।

वहीं शमनेवाड़ी में समयसार के स्वाध्याय में पं. अण्णासाहेब खोत बैठते और उपाध्यायश्री के मुखारविन्द से जिनवाणी का रसपान कर गद्गद् हो जाते थे। उसी समय निश्चय और व्यवहारनय को भी अच्छी तरह समझाया। यद्यपि उस समय हमारा इतना क्षयोपशम तीव्र नहीं था कि पूर्ण रहस्य को जान लें, तथापि वह चर्चा हमारे हृदय में बीज रूप में प्रवेश कर गई, जो आजकाल पाकर ज्ञानवृक्ष के रूप में फलीभूत हो रही है, उससे वर्तमान में इतनी आत्मशांति और आनंद की अनुभूति होती है, जिसे शब्दों में वर्णन करने में असमर्थ हूँ। परिणामस्वरूप संसार के चकाचौंध, ख्याति-पूजा-लाभ हमें लुभा नहीं पाये, निरन्तर सुगति गमन हेतु प्रयासरत हैं।

समस्त संघ सम्मेदशिखर की यात्रा के लिए अकलूज के करीब 200 व्यक्तियों के साथ विहार कर रहे थे। मार्ग में नागपुर पहुँचे तो ज्ञात हुआ सोनगढ़ पंथियों का शिक्षण-शिविर लगा हुआ है, वहाँ सोनगढ़ साहित्य का विशेष बिक्री केन्द्र परवार मंदिर में था। जहाँ 2-3 लाख से अधिक मूल्य का साहित्य रखा था। जबकि सिद्धान्त में बहुत परिवर्तन कर दिया है वह भूल जो मिथ्यात्व के गर्त में धकेल देगी, वह भी दिगम्बर धर्म के सिद्धान्त के नाम पर। यह देखकर आचार्यश्री

कुन्थुसागर जी महाराज एवं उपाध्यायश्री कनकनन्दी जी महाराज को अत्यंत हार्दिक पीड़ा हुई। बस! फिर क्या था, उनकी इस असहनीय पीड़ा ने निर्णय ले लिया, चाहे तो सिद्धक्षेत्र की यात्रा भी स्थगित कर देंगे, आवश्यक हुआ तो चातुर्मास भी यहाँ का मंजूर है, किन्तु मरते दम तक धर्म की सुरक्षा में डटे रहेंगे, मूल सिद्धान्तों में तोड़-मरोड़ नहीं होने देंगे, जिनेन्द्र देव और जिनवाणी की सुरक्षा किसी भी मूल्य पर करने को तैयार रहेंगे। इस सन्दर्भ में प्रतिदिन आचार्यश्री, उपाध्यायश्री, पद्मनन्दी जी महाराज एवं देवनन्दी जी महाराज के प्रवचन होने लगे। मंच से डंके की चोट पर आह्वान किया कि जो कोई चर्चा करना चाहे, अवश्य आयें, किन्तु कोई भी साहस नहीं कर पाया सम्मुख आकर चर्चा-समाधान कर वस्तु के स्वरूप को जानें। समाज का प्रत्येक सदस्य जागृत हो चुका था। सम्पूर्ण साहित्य जहाँ से आया था वहीं भेज दिया गया। इससे क्षुभित हो सोनगढ़ियों ने कोर्ट में केस दायर कर दिया, दुर्भाग्य कि वे केस हार गये। जीत हुई सत्य की और सत्य के रक्षकों की और कदम बढ़ चले सम्मेदशिखर की ओर। सानन्द यात्रा की।

विहार करते हुए आरा पहुँचे, उपाध्याय कनकनन्दी जी महाराज लाइब्रेरी में सतत नवीन ग्रंथों का अध्ययन करने में लीन रहते। नेत्रांध व्यक्तियों की पाठशाला में जाकर देखते कि वे कैसे शिक्षा प्राप्त करते हैं, बारीकी से अध्ययन करते हुए हमें समझाते थे देखों एक इन्द्रिय कमजोर होने पर भी अन्य इन्द्रियों का क्षयोपशम कितना वृद्धि को प्राप्त है।

आलाप पद्धति से हमें सप्तभंग का ज्ञान कराया। जैन दर्शन के मूल सिद्धान्तों से अवगत कराया। सत् ही द्रव्य का लक्षण है। सत् यही अस्ति गुण है। प्रथम भंग स्याद् अस्ति को स्पष्ट किया। वस्तु, द्रव्य अनादिकाल से हैं और अनंतकाल तक रहेगा अस्ति गुण के कारण। द्रव्य को किसी ने बनाया नहीं है। उसी वस्तु में स्यात् नास्ति गुण है। स्वचतुष्टय की अपेक्षा अस्ति है और पर द्रव्य

क्षेत्र काल भाव की अपेक्षा नास्ति है। जैसे आम यह अस्ति है और अन्य आम तथा मौसंबी, सेव आदि की अपेक्षा नास्ति रूप है। अस्ति और नास्ति दोनों का कथन करना स्यात् अस्ति नास्ति भंग है। एक साथ एक शब्द में कथन नहीं कर सकते इस अपेक्षा स्यात् अवक्तव्य है। इसी तरह प्रत्येक द्रव्य में अस्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्व, प्रमेयत्व आदि अनेक गुण पाये जाते हैं। वस्तुत्व गुण वस्तु के स्वरूप का कथन करता है। इस वस्तुत्व गुण के कारण जीव में चेतनत्व, पुद्गल में स्पर्श, रस, गंध, वर्ण, धर्मद्रव्य में गति हेतुत्व, अधर्मद्रव्य में स्थिति हेतुत्व, आकाशद्रव्य में अवगाहन हेतुत्व, कालद्रव्य में परिणमन हेतुत्व गुण की सिद्धि होती है। उस समय उपाध्याय महाराज बहुत ही परिश्रम के साथ पढ़ाते थे, वही आज धीरे-धीरे क्षयोपशम वृद्धि के साथ आत्मिक सुख का कारण बन रहा है। द्रव्यत्व गुण के अभाव में द्रव्य की सिद्धि नहीं होने पर संसार की सिद्धि भी नहीं हो सकती तब शून्यवाद आ जायेगा। ये मूर्तिक या अमूर्तिक द्रव्य उनमें स्थित प्रमेयत्व गुण के कारण ज्ञान के विषय हो रहे है, प्रमेयत्व के अभाव में उन द्रव्यों को जान नहीं सकते। आज जो खोज हो रही है, वह यंत्र के द्वारा मूर्तिक द्रव्य को ही जान सकते हैं। किन्तु जैन दर्शन के सूक्ष्म रहस्य को जानकर विशेष सुख की प्राप्ति होती है। जैसे धन का इच्छुक धन की प्राप्ति से सुखी होता है, उससे भी अनंतगुणा सुख वस्तु के यथार्थ ज्ञान से प्राप्त होता है। इस प्रकार अनंत संसार भटकते हुए इस पंचमकाल में भी उपाध्याय कनकनन्दी जी महाराज ने हमें जो ज्ञान दिया, वस्तु के स्वरूप को समझाया, इस उपकार को हम भव-भव में भी विस्मृत नहीं कर सकते। यही ज्ञान संसार को काटने में समर्थ होगा। ऐसी महान् उपलब्धि हमें हुई है जो मोक्ष का मार्ग प्रशस्त करेगी, उपाध्यायश्री ने हमें धन्य कर दिया।

सन् 1988 में आरा चातुर्मास के अंतर्गत दीक्षा समारोह के समय उपाध्यायश्री को ''ऐलाचार्य'' पदवी से समलंकृत किया गया। मुनि पद्मनन्दी जी

को 'बालाचार्य' पदवी दी गई प.पू. कुन्थुसागर जी महाराज के शुभ हस्तों से, करीब दस हजार श्रावकों की उपस्थिति में।

उसी तरह महाराज के स्वभाव में विनय गुण भी कूट-कूटकर भरा है। पदवी देते समय ही समझा दिया था यह हमारे संघ की व्यवस्था जानना। बड़े साधुओं से मिलने पर उनका पूरा आदर-सत्कार करें। फलतः सोनागिरि क्षेत्र में हमारे संघ के सभी साधुओं ने आचार्य विमलसागर जी महाराज के अतीव भक्ति के साथ दर्शन किये। ऐलाचार्य और बालाचार्य पदवी होते हुए भी हमने उपाध्याय भरतसागर जी महाराज की भक्तिपूर्वक वंदना की, जिससे वे बहुत ही प्रभावित हुए। विनय के साथ करीब 1 माह साथ-साथ स्वाध्याय किया और परस्पर वात्सल्य गंगा में स्नान करते रहे। यह पूज्य कनकनन्दी जी महाराज द्वारा प्रदत्त व्यवहार ज्ञान का ही प्रभाव था। मूलाचार पढ़ते हुए प्रकरण आया साधु द्रव्य-पूजा कर सकते हैं। इस विषय को महाराज ने बहुत ही सुंदर ढंग से स्पष्टीकरण किया कि विधान में श्रावक नारियल पर हाथ जब साधु से लगवा सकते हैं तब श्रावक द्वारा द्रव्य सामग्री दिये जाने पर पूजा भी की जा सकती है। इसी तरह श्रावकाचार पढ़ाते समय समझाया कि सात प्रतिमाधारी को सात धागों का जनेऊ धारण करना चाहिये। क्षुल्लकजी को 11 तार की जनेऊ। हमने भी क्षुल्लक अवस्था में जनेऊ धारण की थी। कनकनन्दी जी महाराज तो क्षुल्लक अवस्था में एक थाली, एक गिलास और एक कटोरा कपड़े में बाँधकर आहार पर जाते थे और स्वयं ही मांजकर साफ करते थे। उनका आचरण पूर्णतः आगम के अनुकूल था और गुरु के प्रति समर्पित अनन्य भक्ति थी।

सन् 1991 में दिल्ली पहुँचे, जहाँ उपाध्याय मौनप्रिय आनंदसागर जी महाराज विराजमान थे। वहाँ ऐलाचार्य कनकनन्दी जी महाराज को ''विश्वधर्म प्रभाकर'' की श्रेष्ठ पदवी से अलंकृत किया गया। काफी समय तक संघस्थ सभी साधुओं को न्याय और सिद्धान्त ग्रंथों का तर्क और उदाहरणों के द्वारा वैज्ञानिक विश्लेषण कर स्पष्टीकरण किया।

संघ सहित हस्तिनापुर की ओर गमन किया। शांतिनाथ, कुन्थुनाथ, अरहनाथ भगवान् की जन्मभूमि के दर्शन कर अत्यधिक आह्लादित हुए। ऐलाचार्य कनकनन्दी जी महाराज को बाल्यकाल से ही हर वस्तु को सूक्ष्म दृष्टि से देखने की रूचि तो थी ही। जम्बूद्वीप की रचना देखकर हृदयकमल खिल उठा। प्रतिदिन उस रचना, कृति तक जाकर हम सभी को त्रिलोकसार ग्रंथ के आधार पर अन्वेषण करते हुए सिखाते थे। ज्ञान के साथ-साथ प्रत्यक्ष दर्शन से सबको समझने में आसानी महसूस हुई। गणिनी ज्ञानमती माताजी से भी अनेक ग्रंथों की खूब चर्चा हुई। साथ ही चर्या भी समझायी गयी। माताजी समयसार की टीका उस समय लिख रही थी अतः कई रहस्य खोलें। माताजी भी ऐलाचार्य कनकनन्दी जी महाराज से चर्चा कर उनके ज्ञान के प्रति गौरव अनुभव करने लगी। स्वयं माताजी ने सामायिक विधि बतलाते हुए कहा कि चैत्यभक्ति, पंचगुरुभक्ति के साथ सामायिक करनी चाहिए। उसी तरह अभिषेक देखते समय सिद्धभक्ति, चैत्यभक्ति, पंचगुरुभक्ति का पठन करना चाहिए। वहाँ जो शिविर का आयोजन किया गया था, जिसमें करीब 100 विद्वानों को आमंत्रित किया गया था। उस शिविर में ऐलाचार्य कनकनन्दी जी महाराज ने अध्यापन करवाते हुए कई गूढ़ रहस्य पर विशेष विश्लेषण किया, जिसे सुनकर सभी बहुत ही आनंदित हुए। महाराज जी के ज्ञान के प्रति नम्रीभूत हुए।

अणिन्दा पार्श्वनाथ अतिशय क्षेत्र पर पंचकल्याण प्रतिष्ठा के समय दिनांक 3.2.1996, माघ शुक्ला छठ को मुनि पद्मनन्दी जी महाराज को, प.पू.ग. कुन्थुसागर जी महाराज ने स्वहस्तों से साधु समुदाय तथा श्रावकों की भारी भीड़ में ''आचार्य पदवी'' से विभूषित किया। चारों तरफ जयकारों से आकाश गूँजायमान हो उठा। संस्कार स्वयं आचार्यश्री ने किये।

आचार्य कुन्थुसागर जी महाराज ने 4-5 वर्ष पहले ही कह दिया था कि आचार्य पदवी समारोह चाहे पहले हो या बाद में, लेकिन क्रम तो दीक्षा तारीख के

अनुसार ही रहेगा। ऐलाचार्य कनकनन्दी जी महाराज को, ग. आचार्य कुन्थुसागर जी महाराज की आज्ञा से 23 अप्रैल, 1996 को उदयपुर में ''आचार्य पदवी'' दी गई। प.पू.आ. अभिनन्दनसागर जी महाराज ने संस्कारारोपण किया। वहाँ आ. अभिनन्दनसागर जी महाराज तथा आचार्य पद्मनन्दी जी महाराज संघ सहित विराजमान थे और कई गणमान्य सज्जन तथा अपार श्रद्धालु समुदाय ने उपस्थिति दर्ज कर खुशियाँ अभिव्यक्त कीं। 'आचार्य पद' के साथ ही ''आचार्य रत्न'' की घोषणा की गयी। 'आचार्य रत्न' कनकनन्दी जी महाराज के जयकारों से सभी झूमते हुए, नृत्य-गान के साथ हर्ष विभोर हो उठे। इस अपूर्व दृश्य को देखकर सभी की आँखों से हर्षाश्रु उमड़ पड़े।

इसके पश्चात् हमारा संघ अन्यत्र विहार कर गया, लेकिन पुनः शीघ्र मिलन की आशा के साथ। लेकिन कर्नाटक, तमिलनाडु, महाराष्ट्र की तरफ विहार करने से वियोग का काल लम्बा हो गया। बार-बार शिक्षागुरु के दर्शन की अभिलाषा मन में हिलोरें ले रही थीं, अतः वह समय भी नजदीक आ गया। संकल्प युक्त लक्ष्य हो और भावना बलवती हो तो हर कार्य में सफलता मिलती ही है। उदयपुर चातुर्मास से ही मेरी भावना प्रबल थी कि गुरुदेव के दर्शन शीघ्रातिशीघ्र कर सके ऐसा अवसर आये। भावना ने रंग लाया और टोकर में 6 जनवरी, 2012 को गुरुदेव के चरण-स्पर्श का लाभ हुआ। हृदय गद्गद् हो गया। रोम-रोम पुलकित हो उठा। आनंदाश्रु से गुरु के पाद-प्रक्षालन किये। चरणों की रज को अहोभाव के साथ मस्तक पर चढ़ाकर अपने को पवित्र किया। गुरु के मन की करूणा रसधारा फूट पड़ी, गले लगाकर पूरा वात्सल्य हम पर उँडेल दिया।

निरन्तर अविरल ज्ञान-गंगा की अजस्र धारा ऐसी बहायी कि इतने दीर्घकाल के वियोग को जैसे हम भूल ही चुके। कितनी उदारता और व्यापकता के साथ मूलभूत सिद्धान्तों को तथा वैज्ञानिक दृष्टि और गणितीय ज्ञान से सभी साधुओं को ऐसा अवगाहन करवाया कि जन्म-जन्मों के पाप-संताप-ताप दूर हो गये। इसी बीच नयी विधा से परिचित करवाया। कविताओं के माध्यम से शब्द-कोश एवं

सिद्धान्त-कोश का रत्न पिटारा ही मानों खोल दिया। अति उत्साह, आनंद और स्नेह से सभी साधुओं को सिखाया, पढ़ाया, समझाया। ऐसे महान् उपकारी गुरु के चरणों में बार-बार नतमस्तक है।

इस समय आचार्यश्री नाना देश-विदेशों में व्यापक रूप से जैन दर्शन का प्रचार कर रहे हैं। नन्हें बच्चों तथा प्रौढ़ों के ज्ञान के लिए नाना प्रकार की कविताओं के माध्यम से जैन दर्शन का कर्म सिद्धान्त, दशकरण का वर्णन किया। राग-द्वेष, मायाचारी, लोभ, भ्रष्टाचार आदि तीन काल में भी सुख के साधन नहीं हो सकते, इन विचारों को काव्य-रचनाओं से समझाते हैं। अणु से ब्रह्माण्ड तक का वर्णन कविताओं से कर रहे हैं। कोई भी विषय ले, सांगोपांग उसे अध्यात्म, सिद्धान्त, गणित और विज्ञान से भर देते हैं।

हम बड़े ही सौभाग्यशाली हैं कि उनके अगाध ज्ञान एवं वात्सल्य का लाभ हमें मिला। उनके चरण-सान्निध्य में आत्मज्ञान की विशेष प्राप्ति हुई। बहुत ही आनंद का अनुभव हुआ। गुरु की विचारधारा कितनी उत्कृष्ट है कि दिन-रात एक ही सोच कि मेरे प्रथम शिष्य को जितना हो सके, अधिक से अधिक विषय कम समय में दे दूँ। ज्ञान-दान की विशाल भावना ने हमारे हृदय-कमल को प्रफुल्लित कर दिया है। गुरुदेव की प्रशंसा, उनके गुणगान में हमारे शब्द भी कम पड़ रहे हैं। उनके द्वारा प्राप्त ज्ञान का सदैव चिंतन-मनन करते हुए आत्मसाधना में हम प्रगति करते रहें, यही मनोभावना। गुरुदेव के ज्ञान का लाभ मात्र भारत ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण विश्व का एक-एक व्यक्ति प्राप्त कर अपने को बड़भागी, महान् बनायें। सभी ज्ञान और वैराग्य से लाभान्वित हों। सभी को रत्नत्रय की प्राप्ति, वृद्धि और सिद्धि हो यही हार्दिक कामना। गुरुदेव के चरणों में कोटिशः नमोऽस्तु।

आचार्य पद्मनन्दी

टोकर, दिनांक 15.1.2012

आचार्यश्री कनकनन्दी जी सम्बन्धी

व्यक्तित्व-कृतित्व एवं भविष्य

हस्तरेखा विशेषज्ञ सलाहकार-श्री सम्भवकुमार पारसमल जैन (फागीवाला)
ब्यावर वाले, इचलकरंजी (महा.), मो. 09421108151

प्रस्तुतिकार-मुनिश्री सुविज्ञसागर, संघस्थ आचार्यश्री कनकनन्दी जी गुरुदेव

प.पू. धर्म-दर्शन-विज्ञान समन्वयक, आधुनिक युग के महान् शान्ति-समता क्रान्ति के प्रणेता, भारत भूमि के जाज्वल्यमान नक्षत्र दिगम्बर जैनाचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव जिनके ज्ञान-विज्ञान की प्रगतिशीलता से सारा विश्व चमत्कृत हो रहा है, ऐसी आध्यात्मिक विभूति के दर्शन-वंदन हेतु इचलकरंजी (महा.) से पधारे ज्योतिषी श्री सम्भवकुमार जी जैन गुरुदेव के महान् व्यक्तित्व व शुभ अंग लक्षणों से इतने प्रभावित व अभिभूत हुए कि उन्होंने प.पू. पूज्यश्री गुरुदेव व उनके आगन्तुक प्रथम शिक्षा प्राप्त सिद्धान्त ज्ञाता दि. जैनाचार्य श्री पद्मनन्दी जी गुरुदेव ससंघ व स्वसंघ दोनों संघों की उपस्थिति में गुरुवर श्री कनकनन्दी जी के विराट व्यक्तित्व-कृतित्व-भविष्य व गुणों का बखान विविध आयामों के माध्यम से प्रस्तुत किया, जिसका वर्णन निम्नलिखित बिन्दुओं के माध्यम से प्रस्तुत हैं-

1. सूर्य रेखा : गुरुदेव के विलक्षण हस्त रेखाओं में सर्वप्रथम स्वेच्छा से सूर्य रेखा को देखकर सम्भवकुमार ने बताया आपकी सूर्य रेखा अत्यंत प्रबल है जो कि करोड़ों व्यक्तियों में किसी एकाध महापुरुष में ही पाई जाती है जो कि अन्तःप्रज्ञा (आध्यात्मिक तेज) की प्रतीक है।

2. हृदय रेखा : गुरुदेव की सीधी सिंगल हथेली से आरपार विलक्षण रेखा के माध्यम से बताया कि ऐसी रेखा महान् उदारता, सदाशयता, पवित्रता, सनम्र सत्यग्राहिता, वैश्विक कल्याण से ओतप्रोत भावों को दर्शाती है।

3. कला रेखा : दुनियाँ से हटकर युग प्रवर्तक, सर्व कल्याणकारी, सर्वजीव हितकारी, पर्यावरण सुरक्षा, विश्व शान्ति, सामान्य लोगों की परिकल्पनाओं से परे नवाचार करते हुए आगे बढ़ना, एकला चलने का सत्साहस गुरुदेव की विशेषता है।

   आगे एस.पी. जैन ने बताया साधु बनकर आपका तीसरा नेत्र खुला जो कि महान् आध्यात्मिक सन्त दृष्टि से कल्याणकारी, हितकारी बना वरना आप साधु नहीं बनते तो यही लक्षण राष्ट्रीय-अन्तर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक साहसिक कार्य करने वाला नेतृत्व करने में सहायक होता।

4. तीन खड़ी विशेष रेखाएँ : ये रेखाएँ अनुशासन प्रिय नेता, फक्कड़पन व स्वाभिमान को प्रगट करने वाली हैं।

   आगे बताया हे गुरुदेव! आपका कार्य बैठे-बैठे सम्पन्न होगा, विशेष उठापटक, दौड़-धूप करने की आवश्यकता कभी भी नहीं पड़ेगी। आप मान-सम्मान-यश-कीर्ति-ख्याति-लाभ आदि से सदैव ऊपर उठे रहेंगे, जिसे सामान्य जन नहीं समझ पायेंगे। आपकी बुद्धि सामान्य व्यक्ति से तीन गुणी है, एवं इसमें वृद्धि होगी।

5. झण्डा रेखा : आप बाह्य क्रियाकाण्डों से हटकर आन्तरिक (भावात्मक) विकास करते जा रहे हैं। आप जहाँ जायेंगे वहाँ की भूमि पवित्र, वहाँ का क्षेत्रीय व व्यक्तियों का सर्वांगीण विकास होगा।

6. त्रय मस्तिष्क रेखाएँ : आपके पूर्वांकलन, पूर्वाभास, सतर्कता, अनुभवपरकता की एवं शुभ स्वप्न आने की प्रतीक हैं। आप सदैव गुणग्राही व प्रकृति के हर विषयों, व्यक्तियों, जीवों से शिक्षा ग्रहण करने वाले शिक्षार्थी, शोधार्थी हैं।

7. मस्तिष्क तिलक : आप पूर्व के भव में साधु, शोधार्थी, जिज्ञासु, चिंतनशील व्यक्तित्व के धारक होने का प्रतीक है। ज्ञान-विज्ञान में लीनता का चिह्न है।

8. तीखा उन्नत नाक : यह आपकी वाक्पटुता, अभिव्यक्ति व सुनने की क्षमता आदि गुणों की परिचायक है। आप अधिक सुनेंगे व जो बोलेंगे सटीक व अल्प बोलेंगे।

9. शनि की रेखा : (क्षेत्र) गुरुदेव की एकान्त साधना, मौनवृत्ति, वैराग्यशीलता, निस्पृह वृत्ति, भाग्यशाली होने का परिचय दे रही है।

10. बुध-शनि रेखा : (क्षेत्र) आचार्यवर गुरुदेव श्रीसंघ का आधुनिक दृष्टि से विस्तार व विकास नवीन आयामों, शिक्षण संस्थाओं, विश्वविद्यालयीन शोध-बोध-शिक्षा आदि की दृष्टि से विशेष होगा। पद-ख्याति न चाहते हुए शिष्य-प्रशिष्य वर्गों से जिनधर्म-शासन, ज्ञान-विज्ञान की रचनात्मक प्रभावना होगी। आगे पुनः बताया कि आपके तृतीय नेत्र अर्थात् तपोबल, मनोबल, आत्मबल आदि अन्य विशिष्ट गुणों को सामान्य दुनियाँ नहीं पहिचान पायेगी। यहाँ तक कि बड़े-बड़े आचार्य साधु आदि भी आपको पहिचान न सकेंगे।

11. जीवन रेखा : एस.पी. जैन ने जीवन रेखा देखकर कहा आपकी आयु 90 वर्ष से ऊपर ही होगी अर्थात् आप स्वस्थ, सबल, शतायु, दीर्घायु होंगे।

12. त्रिशूल रेखा : आप शक्तिशाली, सत्साहसी, तेजस्वी व्यक्तित्व के धारक हैं।

13. मंगल रेखा : आचार्य देव का आत्मबल, स्वास्थ्य अच्छा रहेगा। संघ में अनुशासन, आत्मानुशासन बना रहेगा।

14. पैरों में मन्दिर, पद्म रेखा तथा गुलाब की पंखुड़ी होने से आचार्यश्री जहाँ भी जायेंगे वहाँ का क्षेत्र विकास, जिनशासन प्रभावना होकर धर्म-ध्वजा फहरायेंगे। आप अपना कोई निजी क्षेत्र, गिरि, संस्थान आदि नहीं बनायेंगे अर्थात् आप निर्द्वन्द, निष्पक्ष, फक्कड़, निस्पृह रहते हुए आध्यात्मिक

विकास करेंगे। आपके शिष्य-भक्तों के द्वारा यह सब सहज-सरल रूप से होता रहेगा।

15. शनि शुक्र रेखा : निस्पृह वृत्ति की परिचायक है।

16. गुरु रेखा : दबी रेखा अर्थात् गुरु क्षेत्र (पर्वत) दबा हुआ होने से स्वदेश व स्वजनों की अपेक्षा विदेश वाले आपको अधिक मानेंगे-पूजेंगे। गाँव का जोगी-जोगना आनगाँव का सिद्ध वाली कहावत आप पर सटीक सिद्ध होगी। अर्थात् भारत के लोग आपको नहीं समझ पायेंगे जबकि विदेश के लोग अधिक समझ पायेंगे। अंत में यहाँ तक कह दिया हे गुरुदेव! आपकी समाधि के अनन्तर आपको अधिक पूजेंगे।

17. पद्म रेखा : गुरुदेव जंगल में मंगल करेंगे तथा जहाँ पदार्पण करेंगे वहाँ प्रबल पुण्य से ग्राम-नगर-स्थान-क्षेत्र आदि विकसित होंगे, जो जन गुरुदेव की सेवा व्यवस्था आदि करेंगे उनका भी विकास होगा। गुरुदेव के लम्बे हाथ महापुरुष के प्रतीक हैं जिससे आप सर्व-धर्म-समभावी, गुणग्राही, सबसे सीखते हुए सनम्र सत्यग्राही, मौनप्रिय, अनावश्यक नहीं बोलने वाले साधक बने रहेंगे।

आपका अनुभवात्मक ज्ञान होने से आप जागतिक परिस्थितियाँ, जलवायु, प्राकृतिक आपदा, विज्ञान, पर्यावरण, प्रकृति, शकुन भविष्य दृष्टा होने से आपका पूर्वानुमान, पूर्वाकलन सही सिद्ध हो रहा है एवं आगे भी होता जायेगा।

18. तालु का गोल : गुरुदेव का यह चिह्न आपके ब्रह्माण्डीय ज्ञानी होने का प्रतीक है। आप एक स्थान में बैठकर सारे विश्व-क्षेत्र का ज्ञान प्राप्त करने वाले अलौकिक महापुरुष हैं। आप अच्छे शकुन शास्त्री हैं आप एक से अनेक विषयों का ज्ञान-भान करने वाले अद्वितीय पुरुष है। आप खगोल-भूगोल-राजनीति-न्याय-अर्थशास्त्र आदि के अच्छे ज्ञाता हैं अतः आप

राष्ट्रीय-अन्तर्राष्ट्रीय गतिविधियों के आधार पर राजनीतिक भविष्यवाणी करने वाले युगदृष्टा साधु हैं। आपका विशिष्ट प्रभामण्डल होने से सामान्य जन आपके समीप नहीं बैठ पायेंगे; विशिष्ट साधु ज्ञानीजन ही आपके पास बैठेंगे। जनरल साधु भी नहीं समझ पायेंगे।

19. दन्त व तालव्य लक्षण : गुरुदेव के 32 दाँत होने से आपकी भविष्यवाणी सत्य सिद्ध होती है। तीखे दाँत बुद्धिमान होने के तथा मध्य के दाँत का गैप आपके कूट-कपट-मायाचारी से रहित होने अर्थात् सरलता-सहृदयता-सदाशयता का प्रतीक है।

20. लचीला अँगूठा : सनम्र-सत्यग्राही-सहिष्णुता का प्रतीक तथा 90 अंश से अधिक होने से उदारवादी-प्रगतिशील होने का मुख्य लक्षण है।

    अंगुलियों की गाँठें उभरी हुई होने से आप महान् दार्शनिक होने का लक्षण हैं।

21. पैरों के नीचे का गैप : उन्नत विचार, सारासार विचार ग्रहण का प्रतीक है।

22. चौड़ी छाती : साहस, धैर्य, वीरता, विकास, सिंहचाल के प्रतीक है।

23. गले की मणिबन्ध रेखा : गुरुदेव के महान् श्रेष्ठ ज्येष्ठ परिष्कृत व्यक्तित्व की प्रतीक है।

24. छाती के बाल : उदारता-सरलता-दयालुता के प्रतीक हैं।

25. गज मस्तक : उन्नत विचार का व उन्नत भाग्य का प्रतीक हैं।

26. गहरी आँखें, उभरी भृकुटी : अन्र्दृष्टि व सूक्ष्मदृष्टि का प्रतीक है।

27. हथेली में मुट्ठी के बाहर तिल : धर्म ज्ञान प्रभावनार्थे आवश्यक धन आएगा किन्तु सञ्चय नहीं होगा। इस प्रकार आचार्य भगवन्त के 99 प्रतिशत अंग लक्षणों को शुभ व कल्याणकारी बताया।

मेरी जीवन यात्रा : शिशु से आचार्य तथा आगे

राग : विराग.....चन्दा मामा दूर के.....

-आचार्य कनकनन्दी

आत्म-विश्लेषण के हेतु लिख रहा हूँ जीवन की गाथा/(यात्रा)।
जिससे मैं शिक्षा लेकर उन्नत बनाऊँ जीवन यात्रा॥ (1)

तीन वर्ष की आयु से ही हर विषय मुझे याद रहा।
पाँच वर्ष की आयु से ही विश्लेषण मैं करता रहा ॥ (2)

छोटी बहन के साथ ही माता का दूध पीता रहा।
चित्त में मेरा चित्रपट सम अभी तक सचित्र/(अंकित) रहा ॥ (3)

छह वर्ष की आयु से ही एकला/(एकान्त) में ही सो रहा।
प्रौढ़ मित्रों के साथ ही तात्त्विक चर्चा करता रहा ॥ (4)

पहला दिन पाठशाला में कैसे गया क्या पढ़ा?
'अ' अक्षर को गुरु द्वारा तीन दिन तक सही पढ़ा ॥ (5)

योग्यता के कारण ही तीसरी कक्षा में जा पढ़ा।
दूसरी कक्षा बिना पढ़े मैं तीसरी में अच्छा पढ़ा ॥ (6)

तीसरी कक्षा से मॉनीटर मैं हर कक्षा में सदा रहा।
गुरुजी की अनुपस्थिति में अनुशासन से पढ़ाते रहा ॥ (7)

कक्षा तीन से बिना शुल्क ही अन्य बच्चों को शिक्षा दिया।
ट्यूशन में कभी न पढ़ा ट्यूशन मैं पढ़ाता रहा ॥ (8)

कोर्स से साथ अन्य विषय भी अध्ययन (मैं) करता रहा।
धर्म दर्शन नीति नियम देश-विदेशों का ज्ञान लिया ॥ (9)

गणित विज्ञान दर्शन शास्त्र मेरा सबसे प्रिय रहा।
न्याय राजनीति स्वास्थ्य विज्ञान कथा पुराण भी पढ़ता रहा ॥ (10)

तैराकी भ्रमण योगासन व एकान्त-ध्यान भी होता रहा।

वृक्षारोपण सफाई काम समाज सेवा करता रहा ॥ (11)

आत्म कल्याण राष्ट्र निर्माण विश्व कल्याण का भाव जगा।

सत्य जिज्ञासु भाव है मेरा सबसे अधिक तीव्र जगा ॥ (12)

हर क्षेत्र के महापुरुषों से ज्ञान अर्जन होता रहा।

मेरा लक्ष्य भी तीव्र गति से उच्च से उच्च होता गया ॥ (13)

मैंने बाल विद्यार्थी वय में तीनों लक्ष्य तय किया।

नेता वैज्ञानिक सन्तों में से एक बनने का प्रण किया ॥ (14)

यह भी मैंने प्रण किया रहूँगा जीवन भर सदा।

बालकवत् विद्यार्थी रहना बाल ब्रह्म शान्त सदा ॥ (15)

इसी हेतु मैं बाल्यकाल से ब्रह्मचर्य श्रेय माना।

विवाह-बन्ध से मुक्त रहकर उच्च लक्ष्य का ध्येय चुना ॥ (16)

सत्ता-सम्पत्ति ढोंग प्रसिद्धि फैशन-व्यसन नहीं भाया।

सादा जीवन उच्च विचार प्रगतिशील सदा चाहा ॥ (17)

सत्यग्राहिता प्रामाणिकता अनुशासन एकाग्रमना।

निर्भय निर्द्वन्द्व निर्लोभ भाव सदा रहा मम स्वाभिमान/(आत्म सम्मान) ॥ (18)

मानव कल्याण करने हेतु नेता होने का भाव रहा।

भ्रष्ट तंत्र के कारण मुझे राजनीति नहीं भाया ॥ (19)

नहीं विज्ञान में परम सत्य आत्म विकास का श्रेय लक्ष्य।

साधुता से मिले ये लक्ष्य/(सत्य) अतएव बना श्रमण लक्ष्य ॥ (20)

इसी से बनता तीनों काम नेता विज्ञानी सन्त काम।

स्व-पर-विश्व हित काम सत्य समता शान्ति काम ॥ (21)

सूर्य समान प्रकाशी बनो सहजता से प्रकाश करो।

पाप ताप से निर्लिप्त रहो समाज-पंक से परे रहो ॥ (22)

इसी से मिलती आत्मिक शान्ति विश्व शान्ति की प्रथम क्रान्ति।

आत्मज्ञान की निर्मल ज्योति विज्ञान से परे है ज्योति ॥ (23)

मूल सिञ्चन से बढ़ता वृक्ष फूल-फल भी आता विशेष।

तथाहि आत्म विशुद्ध द्वारा सर्व विकास होता अशेष ॥ (24)

आत्म विशुद्धि की वृद्धि द्वारा क्षुल्लक मुनि पाठक बना।

ऐलाचार्य व आचार्य बना गुरुकृपा सम्बल मिला ॥ (25)

अनेक उपाधि स्वतः ही मिले श्रीकुन्थु देशभूषण सूरी।

अभिनन्दन व आनन्द सूरी प्रदाता मुदित समाज भारी ॥ (26)

सिद्धान्त चक्री आचार्य रत्न ज्ञान-विज्ञान के दिवाकर।

विश्वधर्म के हे ! प्रभाकर ज्ञानोपयोगी गुरु प्रवर ॥ (27)

भावना वृद्धि होती रहती आत्म विशुद्धि समता शान्ति।

जिससे शोध-बोध बढ़ता निष्पृह भाव बढ़ता जाता ॥ (28)

चारों अनुयोग सिद्धान्त ग्रन्थ अनेकान्तमय ज्ञान किया।

अलौकिक महागणित इसीसे सभी विषयों का मान किया ॥ (29)

विमल सूरी श्रीकुन्थु सिन्धु विजयामती से ज्ञान लिया।

विद्यानन्दी भरत सूरी विद्वत्गण से बोध किया ॥ (30)

बच्चों से भी अनेक भाषा प्रभाकर से संस्कृत पढ़ा।

विज्ञान के चैनलों द्वारा नवीन शोधों का बोध बढ़ा ॥ (31)

आधुनिकतम ज्ञान-विज्ञान का समन्वय शोध कार्य चला।

अणु से लेकर विश्व-विज्ञान सापेक्ष दृष्टि से शोध चला ॥ (32)

मनोविज्ञान से शिक्षा विज्ञान पर्यावरणीय शोध मिला।

वैश्विक स्वास्थ्य न्याय राजनीति एकीकृत सिद्धान्त मिला ॥ (33)

इसी से मुझे ज्ञात हो चला आत्मज्ञान ही परमज्ञान।
समस्त लौकिक ज्ञान-विज्ञान आंशिक सत्य,नहीं सम्पूर्ण ॥ (34)

पठन-पाठन लेखन काम देश-विदेशों में धार्मिक काम।
चल रहा है तथापि मम आत्मिक भाव विरक्त मन ॥ (35)

श्रेष्ठ है सहिष्णु करूणा मैत्री सर्वजीव प्रति आत्मिक दृष्टि।
ख्याति पूजा लाभ भौतिक दृष्टि श्रेष्ठ नहीं, श्रेय आत्मिक प्राप्ति ॥ (36)

अथ/(यहाँ) से आगे बढ़ता जाऊँ सर-स्वरूप को समग्र पाऊँ।
सच्चिदानन्द रूप हो जाऊँ संसार यात्रा से विराम चाहूँ ॥ (37)

समस्त बन्धन दोषों से परे समग्र मुक्त गुण मैं चाहूँ।
आधि व्याधि व उपाधि परे 'कनकनन्दी' स्वयं को चाहूँ ॥ (38)

टोकर, दि. 3.1.2012, रात्रि 1.04

मेरा (आ. कनकनन्दी) स्व-उपदेश को अधिक महत्व एवं परोपदेश को कम महत्व देने का कारण

-आ. कनकनन्दी

राग : अच्छा सिला दिया.....

उपदेश देना मेरा भाव भी नहीं आत्मकल्याण का भाव ही सही।
स्वकल्याण से हो विश्वकल्याण प्रकाश फैले यथा सूर्य समान ॥ ॥स्थायी॥
तीर्थंकर बुद्ध ऋषि ऐसे ही किये आत्मकल्याण को पहले किये।
योग्य शिष्यों को ही प्रबोध दिया भव्य कमलों को विकास किया ॥ (1)
छयासठ दिन महावीर न बोले योग्य शिष्य बिना क्यों वे बोले?
अयोग्य को बोलना दोषप्रद होता है कुपात्रदान भयंकर होता है ॥ (2)
सभी माने स्वयं को महाज्ञानी सच्चा अच्छा व स्वाभिमानी।

आदर्श निर्दोष ज्ञानी ध्यानी निर्मल धर्मात्मा गुणखानी ॥ (3)
दूसरों को देते हैं सीख सदा स्वयं न मानते सीख कदा।
दूसरे बने सब सच्चा अच्छा हम तो हरदम सही व अच्छा ॥ (4)
स्वयं का दोष अन्य पर मढ़ते स्वयं को निर्दोष सिद्ध करते।
अन्य सुधरे सब सही होगा मेरे अनुकूल सब काम होगा ॥ (5)
सांसारिक काम में व्यस्त रहते व्यवस्था रहित कार्य करते।
समय अभाव का ढोंग करते/(रोना रोने) निष्पृही सन्तों को हेय मानते ॥ (6)
गहन आध्यात्मिक कथा न भाती चुटकुला सास-बहू कथा में रूचि/(कथा ही भाती)।
मनोरञ्जन में होती अधिक रूचि मनमञ्जन में न होती रूचि ॥ (7)
बाह्य/(भीड़) प्रदर्शन अश्लील भाये धन जन मान तुच्छता भाये।
प्रतिस्पर्द्धा रूढ़िवाद अहंता चले धन बल बाहुबल सर्वत्र चले/(बोले) ॥ (8)
सत्य समता/(शान्ति) का नहीं सम्मान उदार सहिष्णुता का नहीं है भान।
भेद-भाव पूर्ण तेरा मेरा कुज्ञान होती राजनीति कुटिल जान ॥ (9)
सत्य को भी असत्यपूर्ण मानते होती न यदि है मनानुकूल बातें।
मनमाना सदा चलता रहता सत्यग्राहीपना अति विरल होता ॥ (10)
सुनना गुनना तथा अनुकरण दुर्लभ होते उत्तर-उत्तर जन।
नहीं जानते तथा नहीं मानते तनातनी सदा सर्वत्र करते ॥ (11)
कृतज्ञता भाव भी जनों में नहीं स्वार्थसिद्धि के बाद पूछते नहीं।
भौतिक स्वार्थसिद्धि संकीर्ण दृष्टि/(प्रीति) अज्ञान मोह से आच्छन्न दृष्टि ॥ (12)
सत्य-तथ्य कहीं भी दिखता नहीं आत्म-परमात्मा का भान ही नहीं।
अतएव उपदेश व्यर्थ ही जाता मेरा समय तो व्यर्थ ही जाता ॥ (13)
दुर्लभ मानव तन व वैराग्य पाया आत्मिक ज्ञान का आनन्द पाया।
ज्ञानानन्द ही मेरा लक्ष्य परम 'कनकनन्दी' का धर्म/(कर्म) परम ॥ (14)

राठौड़ा, दि. 9.12.2011, अपराह्न 5.38

7-9 जनवरी, प्रवासी भारतीय दिवस पर विशेष

(मेरे (आ. कनकनन्दी के) विद्यार्थी एवं श्रोता बनने के लिए अयोग्य व्यक्ति)

अध्यापन-प्रवचन आदि में क्यों कम करता जा रहा हूँ?

(स्व-पर-विश्व में ज्ञान प्रचार हेतु अन्तःप्रयास)

-आचार्य कनकनन्दी

राग : रघुपति राघव.....यमुना किनारे.....

पठन-पाठन मुझे अच्छा लगता.....

शोध-बोध-खोज मुझे प्रिय लगता।

बाल्यकाल से यह चला आ रहा.....

उत्तरोत्तर यह गुण बढ़ ही रहा।

तथापि परिवर्तन कुछ होता जा रहा.....

जनता के कारण से यह हो रहा (है)॥ (1).....

धीरे-धीरे अनुभव होता जा रहा...जनता में ज्ञान गुण कम हो रहा।

सामान्य ज्ञान आदि विशेष ज्ञान...खाना पीना सोना व उठना का ज्ञान।

चलना बैठना तथा रखना ज्ञान...लिखना पढ़ना व बोलना ज्ञान ॥ (2).....

शब्दज्ञान अर्थज्ञान भाषा का ज्ञान...नय प्रमाण व तार्किक ज्ञान।

गणित व विज्ञान या समीक्षा ज्ञान...नहीं होता है समन्वय का ज्ञान।

अलौकिक गणित व अनेकान्त ज्ञान...अति दुर्लभ होता आत्मिक ज्ञान ॥ (3).....

आत्म-कल्याण भाव दुर्लभ अति...कृतज्ञता प्रवृत्ति कम मिलती।

सत्य जिज्ञासु नहीं गुण ग्रहण वृत्ति...नीर-क्षीर विवेक की नहीं प्रवृत्ति।

संकीर्ण रूढ़िवादिता अहं प्रवृत्ति...चले भेड़चाल व भेड़िया वृत्ति ॥ (4).....

समय अनुसार काम नहीं करते...अनुशासन पालन नहीं जानते।

संकीर्ण स्वार्थ से सर्व काम करते...कर्त्तव्यनिष्ठा का भाव नहीं धरते।
आलस्य लापरवाही सदा वरते...फैशन-व्यसन में मस्त रहते ॥ (5).....
सुयोग्य पात्र मुझे नहीं मिलता...अतः ज्ञानदान मेरा नहीं हो पाता।
प्रवासी भारतीय व विदेशी लोग...भारत में निवेश न करे अधिक।
निवेश योग्य न माने भारत देश...भ्रष्टाचार गन्दगी यहाँ विशेष ॥ (6).....
अप्रामाणिकता व लचर नीति...सुस्त प्रशासन व कुराजनीति।
मूलभूत सुविधा का होता अभाव...सरकार में नहीं सहयोग-भाव।
नैतिक आध्यात्मिक कम दिखता...लूट व सुरक्षाहीन भाव दिखता ॥ (7).....
तथाहि उत्साह मेरा कम हो रहा...भावना अनुकूल काम नहीं हो रहा।
इसी हेतु साधु तथा वैज्ञानिकों को...प्रोफेसर जज आदि शिष्य वर्ग को।
शिक्षा देकर भेजता हूँ देश-विदेश...ज्ञान/(धर्म) प्रचार इससे होता विशेष ॥ (8)...
विदेशों में ज्ञान का होता आदर...उनसे धरती में होता प्रचार/(प्रभाव)।
जिससे भारतीय स्वीकार करे...परोक्ष में मेरा भाव सफल करें।
अतएव पाश्चात्य करे विकास...भारत बने फिर उनका शिष्य/(दास) ॥ (9)...
भावना भा रहा हूँ मैं सतत/(विशेष)...शीघ्र हो भारत में गुण विकास।
जिससे भारत का सही विकास होगा...विश्वगुरु बनकर ज्ञान बाँटेगा।
'कनक' इसीलिये अन्तः प्रयास...बाह्य आडम्बरों में नहीं विश्वास ॥ (10).....

टोकर, दि. 8.1.2012, रात्रि 11.00

प्रवचन में मेरी रूचि न होने के कारण

प्रवचन मनोरञ्जन होता जा रहा!

(प्रवचन के विकृत स्वरूप-कारण-परिणाम-निवारणोपाय)

-आचार्य कनकनन्दी

राग : 1. छोटी-छोटी गैया... 2. यमुना किनारे...

''प्रवचन'' ''पर-वचन'' होता जा रहा,

''श्रोता'' आज ''सोने वाला'' होता जा रहा।

''वक्ता'' आज ''बकता'' होता जा रहा,

''मनजय''/(मनमञ्जन) से ''मनोरञ्जन'' होता जा रहा। टेक।

''धर्म'' आज 'धन' रूप होता जा रहा...'स्व-दर्शन' से 'प्रदर्शन' होता जा रहा।

'संस्कृत' अपसंस्कृत होता जा रहा...भीड़ जुटाने का काम होता जा रहा ॥ (1)

मनोरञ्जन के हेतु होता प्रवचन...हँसी-मजा चुटकुला होता प्रयोजन।

सास बहु कथा वार्ता होता नियोजन...जीवन उपयोगी बिना जीविका अर्जन ॥ (2)

पन्थ मत राग द्वेष मान अपमान...निन्दा प्रतिनिन्दा का होता सम्बोधन।

आकर्षण-विकर्षण होता विविध बाजा...नृत्य गाना संगीत व लाईट का मजा ॥ (3)

विज्ञापन पाण्डाल होर्डिंग सज्जा...निमंत्रण पत्रिका कार्ड सुसज्जा।

मञ्च-माइक व सम्मान-माला...नेता-अभिनेता का लगता मेला ॥ (4)

खाना-पीना मजा-मस्ती मिलना-जुलना...सर्कस/(प्रदर्शन) के समान भीड़ देखना।

ताली बजाकर जय-जयकार भी करना...आकर्षक वेशभूषा बन-ठन जाना ॥ (5)

सूक्ष्म विषय रहित प्रवचन होता...धर्म-दर्शन-विज्ञान तर्क/(आत्मा) न सुहाता।

शुद्ध प्रौढ़ भाषा को समझते कम...हल्की भाषा सुनने को चाहते जन ॥ (6)

आत्मज्ञान (तो) खातमा होता जा रहा...अनुभव रहित पाठ होता जा रहा।

भोग-विलास रूढ़ि का विषय हो रहा...धन-जन मान हेतु भाषण हो रहा ॥ (7)
सिद्धान्त शास्त्र कथन लोप हो रहा...नसीरूद्दीन का पाठ रटा जा रहा।
अभिनेता के समान अभिनय हो रहा...यश भीड़ जुटाने का काम हो रहा ॥ (8)
कान पवित्र की कथा खूब हो रही...आत्म पवित्र की कथा शून्य हो रही।
चार्वाक मत प्रयोग सच्चा हो रहा...बाह्य दिखावा में धर्म अच्छा हो रहा ॥ (9)
शर्म आवे, पीड़ा होवे, चिंतन चले...क्या हो गया आज जन-गण में।
विश्वगुरु भारत को क्या हो गया...वैज्ञानिक युग में पीछे हो गया ॥ (10)
साक्षर बने किन्तु शिक्षित नहीं...फैशन करे किन्तु संस्कार नहीं।
आधुनिक बने किन्तु विज्ञानी नहीं...धार्मिक बने किन्तु सुज्ञानी नहीं ॥ (11)
हिंग्लीस भाषा बोले हिन्दी न आती...कुतर्क करे किन्तु विवेक नहीं।
व्यस्त रहे किन्तु अस्त-व्यस्त जीवन...लक्ष्य बिन अन्धी दौड़ करे गमन ॥ (12)
परोपदेश होता नहीं आत्म निर्माण...परोपदेश पाण्डित्य अधिक जन।
टॉर्च सम दूसरों को प्रकाश देते...स्वयं तो अन्धकार में डूबे रहते ॥ (13)
लोभी गुरु लालची चेला की भक्ति...पत्थर नौका की समान यात्री।
इसीलिये मोहमाया नहीं घटती...आध्यात्मिक शान्ति नहीं मिलती ॥ (14)
प्रवचन से प्रायः लाभ न लेते...सुनना-गुनना चर्या नहीं करते।
निस्पृह सन्त का आदर नहीं करते...आहार सेवा व्यवस्था नहीं करते ॥ (15)
इसलिए प्रवचन हेतु मन न करे...करना कराना या सुनना हुए।
द्रव्य क्षेत्र काल भाव का दुरूपयोग भी होता...स्व-पर-विश्व के लिए लाभ न होता ॥ (16)
ज्ञानानन्द प्राप्ति हेतु हो प्रयास...स्व-पर-विश्व का होवे विकास।
इसी हेतु प्रवचन होना विधेय...'कनकनन्दी' का यह है ध्येय ॥ (17)

टोकर, दि. 7.1.2012, रात्रि 1.26

इन रचनाओं की आवश्यकता-पीड़ा/प्रेरणा

मैं (आचार्य कनकनन्दी) बाल्य विद्यार्थी अवस्था से ही विभिन्न भाषाओं की देश-विदेश की प्राचीन से लेकर आधुनिक, आध्यात्मिक, धार्मिक, नैतिक, राष्ट्रीय, सामाजिक, प्राकृतिक, क्रान्तिकारी कविताओं को पढ़ता-सुनता आ रहा हूँ जिसमें से श्रेष्ठ कविताओं का प्रभाव मेरे जीवन में प्रेरणास्पद है। कुछ वर्षों से हिन्दी सिनेमा के कुप्रभाव तथा कुछ कुकवियों के कारण विशेषतः हिन्दी कविता के स्तर में गिरावट हुई है और हो रही है। ऐसा ही प्रादेशिक भाषाओं की कविताओं में भी कुछ गिरावट हो रही है, जिसका कुप्रभाव भारतीयों पर पड़ रहा है इससे भी मुझे पीड़ा हो रही है और श्रेष्ठ कविताओं की आवश्यकता को अनुभव कर रहा हूँ। वैसे तो मैं विद्यार्थी जीवन से ही विदेशी साहित्य आदि का अध्ययन कर रहा हूँ परन्तु 2000 से विदेशी वैज्ञानिक चैनलों का विशेष अध्ययन कर रहा हूँ। इससे विदेशी वैज्ञानिकों की उदारता, व्यापकता, प्रगतिशीलता, अहिंसा, शान्ति, पर्यावरण सुरक्षा, निष्पक्षता, निडरता, नम्रता, जिज्ञासा, सहज-सरलता आदि से मुझे प्रेरणा मिल रही है। 2010 को हमारा ससंघ का चातुर्मास सीपुर अतिशय क्षेत्र में हुआ। वहाँ के एकान्त, शान्त, स्वच्छ, शुद्ध वातावरण में मेरी उपरोक्त आवश्यकता-पीड़ा-प्रेरणा ने मूर्तरूप लेकर इन कविताओं को रचा है। कविताओं के रागों को सही रूप देने में संघस्थ साधु-साध्वी, ब्रह्मचारिणियों का महत्वपूर्ण सहयोग मिल रहा है। इन सबको, अर्थ सहयोगियों को मेरा यथायोग्य प्रतिनमोऽस्तु, आशीर्वाद है। प्रस्तुत कृति में कुछ कविताओं का प्रकाशन हो रहा है। अभी तक सात गीतांजली का प्रकाशन हो चुका है। प्रस्तुत गीतांजली धारा आठ का प्रकाशन आपके अध्ययन मनन व प्रस्तुति के (गाने के लिये) प्रस्तुत है। शेष कविताओं का प्रकाशन आगामी कृति में शीघ्र होगा। इन सब कविताओं के माध्यम से स्व-पर-विश्व में आध्यात्मिक क्रान्ति-शान्ति हो, ऐसी शुभ मंगल कामनाओं के साथ।

-आचार्य कनकनन्दी

विषयानुक्रमणिका

अ.क्र.	गीत व गीत क्रमांक	पृ.क्र.
1.	आचार्य वन्दना	2
2.	वन्द्य चरण जिनके...(आचार्यश्री कनकनन्दी गुरुदेव की विशेषता)	2
3.	कनकनन्दी गुरुदेव के श्रीचरणों में	3
4.	गुरु-शिष्यों (साधु-संघों) का वात्सल्य मिलन	4
5.	मेरे अनुभव के गवाक्ष से (मेरे दीक्षा गुरु आ. कुन्थुसागर जी तथा शिक्षा गुरु आ. कनकनन्दी जी)	6
6.	आचार्यश्री कनकनन्दी जी सम्बन्धी व्यक्तित्व-कृतित्व एवं भविष्य	22
7.	मेरी जीवन यात्रा : शिशु से आचार्य तथा आगे	27
8.	मेरा (आ. कनकनन्दी) स्व-उपदेश को अधिक महत्व एवं परोपदेश को कम महत्व देने का कारण	30
9.	अध्यापन-प्रवचन आदि मैं क्यों कम करता जा रहा हूँ? (स्व-पर विश्व में ज्ञान पचार हेतु अन्तः प्रयास)	32
10.	प्रवचन मनोरञ्जन होता जा रहा! (प्रवचन के विकृत स्वरूप-कारण-परिणाम-निवारणोपाय)	34
11.	इन रचनाओं की आवश्यकता-पीड़ा/प्रेरणा	36

समीक्षा गीतांजली

1.	सुस्वभावम् : स्वागतम् (नववर्ष में नवभाव स्वागतम्)	39
2.	सत्य परिज्ञान की श्रेष्ठतम् पद्धतियाँ (प्रमाण, नय, निक्षे, अनेकान्त, स्याद्वाद का सार)	40
3.	स्व-आकर्षण के सूत्र (उच्च विचार से	

	सुख आकर्षित तो नीच विचार से दुःख)	41
4.	सफलता के सच्चे-अच्छे-सस्ते नियम (कार्य सम्पादन पद्धति)	42
5.	सब में स्वार्थ समाई (भौतिक या आत्मिक स्वार्थ)	44
6.	पापी से भी मैं लेता हूँ शिक्षा	45
7.	लोकोक्तियाँ सम्पूर्ण सत्य नहीं	46
8.	विज्ञान के असत्य मत तथा उससे हानियाँ	50
9.	भाग्य एवं पुरुषार्थ स्वरूप एवं फल	52
10.	ईर्ष्या की आत्मकथा एवं निवेदन (ईर्ष्या के कारण-परिणाम एवं निवारणोपाय)	54
11.	कर्म सिद्धान्त तथा मोक्ष उपाय (करण (परिणाम/भाव) से कर्म के दशविध करण)	55
12.	भारतीयों में सत्य को मानने का सत् साहस नहीं	58
13.	बड़े आदमी की अजीब कहानी	60
14.	ख्याति पूजा-लाभ की कामना : निदान आर्तध्यान (निदान से मिथ्यात्व भाव)	61
15.	क्षीण होता जा रहा है भारत ज्ञान-त्याग-शील! (आधुनिक भारत की तस्वीर)	62
16.	विश्व के हर कण से ज्ञान मिलता (ज्ञान-ज्ञेय मीमांसा)	64
17.	आत्मोद्धार करो : आत्महत्या त्यागों	66
18.	षट् गुण हानि वृद्धि (एकीकृत सिद्धान्त)	67

परिशिष्ट

1.	साधु तीर्थ, त्रिवेणी स्थल राठौड़ा ग्राम में आचार्य श्रीसंघ व मुनिसंघ का ऐतिहासिक वात्सल्य मिलन	68
2.	त्रस आचार्यश्री संघों का अपूर्व वात्सल्य मिलन	71

1. सुस्वभावम्-स्वागतम्

(नववर्ष में नवभाव स्वागतम्)

स्वागतम्! स्वागतम्! स्वागतम्! नवभाव स्वागतम्.....2!

नवभाव स्वागतम्.....2!

(दिव्य/आत्म/स्व)/निज भाव स्वागतम्.....

स्वागत हो मम/(करूँ मैं) सदा सत्य शिव सुन्दरम्.....2

स्वागत करूँ मैं/(हो मम) सदा नित्यानन्द मंगलम्.....2

स्वागत हो ज्ञानानन्द सर्व सुख दायकम्.....2

स्वागत हो चिदानन्द निज आत्म स्वरूपम्.....2/आत्म सुख दायकम्.....2

विगत हो मम सर्व अष्ट कर्म कलंकम्.....2

विगत हो मम सर्व दुष्ट भाव सकलम्.....2

विगत हो मम सर्व पाप ताप दुर्बलम्.....2

विगत हो मम सर्व क्लेश भाव अखिलम्.....2

वैश्विक हित हेतु बने मम/(सर्व/विश्व) भाव मंगलम्.....2

सत्य साम्य शान्ति धारा बहे सदा अमलम्.....2

स्वागत सुस्वभावम् विगत हो विभावम्.....2

'कनक' स्व-स्वभाव को करे अभिनन्दनम्.....2/(करे अभिवन्दनम्)

राठौड़ा, दि. 1.1.2012, रात्रि

पौष शुक्ला अष्टमी, रविवार, संवत् 2068

2. सत्य परिज्ञान की श्रेष्ठतम पद्धतियाँ

(प्रमाण, नय, निक्षेप, अनेकान्त, स्याद्वाद का सार)

राग : चौपाई.....

प्रमाण नय निक्षेप को जानों अनेकान्त सिद्धान्त स्याद्वाद मानों।
इसी से सत्य का परिज्ञान होगा जिससे सम्पूर्ण विकास होगा ॥ (1)

केवलज्ञान है पूर्ण प्रमाण सम्यग्ज्ञान भी होता प्रमाण।
प्रमाण अंश नयज्ञान भी होता निक्षेप वस्तु विधान होता ॥ (2)

अनेकान्त है वस्तु स्वरूप जिसके होते अनन्त रूप।
स्याद्वाद होता कथन रूप अनन्त सप्तभंग स्वरूप ॥ (3)

पाँच भेद है सम्यग्ज्ञान सकल प्रत्यक्ष है केवलज्ञान/(अनन्तज्ञान)।
मनःपर्यय अवधि श्रुत मन देश प्रत्यक्ष व परोक्ष ज्ञान ॥ (4)

मनःपर्यय तथा अवधिज्ञान देश प्रत्यक्ष व असंख्य ज्ञान।
श्रुत मतिज्ञान परोक्ष ज्ञान संव्यवहारिक प्रत्यक्ष ज्ञान ॥ (5)

नाम स्थापना द्रव्य भाव न्यास चार प्रकार होता निक्षेप।
गुणादि रहित नाम निक्षेप गुण आरोपित स्थापना न्यास ॥ (6)

अवर्तमान पर्याय न्यास द्रव्य में होना द्रव्य निक्षेप।
प्रवर्तमान पर्याय युक्त द्रव्य सो होता भाव निक्षेप ॥ (7)

नय के अनेक भेद-प्रभेद ज्ञाता अभिप्राय नय के भेद।
निश्चय-व्यवहार नय के भेद शुद्ध-अशुद्ध तथाहि भेद ॥ (8)

सम्पूर्ण नय ही सापेक्ष होते अन्य नय को नहीं काटते।
निरपेक्ष नय ही मिथ्या होते जो अन्य नय को नहीं मानते ॥ (9)

व्यवहार बिना भी निश्चय नहीं बन्ध बिन यथा मोक्ष भी नहीं।
निश्चय बिना भी व्यवहार नहीं अग्नि बिना यथा धुआँ भी नहीं ॥ (10)

अनेकान्त से इसे भी जानों स्याद्वाद से इसे बखानों।

इसी से सर्व समाधान मानों विश्वगुरु अनेकान्त है जानों ॥ (11)

द्रव्य में होते अनन्त गुण सत्य अनेकान्त अतः प्रमाण।

एक गुण ग्रहण नय का ज्ञान स्याद्वाद होता तत् कथन ॥ (12)

अस्ति नास्ति अव्यक्तव्य तीनों परस्पर मिलन से सप्तभंग जानों।

अनन्त गुण होते द्रव्य में जानों अनन्त सप्तभंग इसी से मानों ॥ (13)

इसी से हठाग्रह दूर होता सत्यग्राहीपना प्रगट होता।

कलह विसंवाद नहीं होते समस्त समाधान इसी से होते ॥ (14)

यह है आगम तर्क पद्धति वैज्ञानिक व्यवहार पद्धति।

स्व-पर-विश्व हितकर पद्धति 'कनकनन्दी' की श्रेय पद्धति ॥ (15)

टोकर, दि. 14.1.2012, रात्रि 10.19

(यह कविता आचार्य पद्मनन्दी के अनुरोध से बनी)

3. स्व-आकर्षण के सूत्र

(उच्च विचार से सुख आकर्षित तो नीच विचार से दुःख)

बंगला : चौपाई राग

स्व-आकर्षण सूत्र को जानों, सुखी-दुःखी होने के उपाय मानों।

उन्नत भाव से सुखी बनोगे, विपरीत भाव से दुःखी बनोगे ॥1॥

भौतिक आकर्षण समान जानों, स्व-आकर्षण करता काम।

यथा भाओगे तथा भोगोगे, यथा बोओगे तथा पाओगे ॥2॥

शान्ति भोगने का यदि है भाव, शान्त भावमय कर स्वभाव।

तनाव से युक्त यदि स्वभाव, दुःख भोगने का किया विभाव/प्रारम्भ ॥3॥

आत्मविश्वास उन्नत भाव, उदार सहित पवित्र भाव।

उत्साह सह सत् कर्त्तव्य, स्व आकर्षण होता उद्भव ॥4॥

इसी से पुण्य का विकास होता, सुख स्वास्थ्य वैभव मिलता।

ख्याति पूजा लाभ मित्र मिलता, भाव अनुसार भावी मिलता ॥5॥

प्रमाण साठ हजार विचार, करता मानव दिवस हर।

अधिकांश/अधिसंख्य करता छोटे विचार, अनुपयोगी व खोटे विचार ॥6॥

जिससे आकर्षित होते पाप, मिलते अनेक दुःख संताप।

रोग दारिद्र व उदास भाव, कलह तनाव निराशा भाव ॥7॥

इसलिए दृढ़ संकल्प संयुक्त, महान् भाव को भाओं सतत्।

क्षुद्र भाव को करो निरस्त, आकर्षित होंगे सुख समस्त ॥8॥

सतत् सहज होते विचार, उसे ही करो उच्च विचार।

उससे सुख आकर्षित होगा, तुम से दुःख दूर रहेगा ॥9॥

यह प्राकृतिक वैश्विक सूत्र, भाव अनुसार गुन्थित सूत्र।

कर्म सिद्धान्त व मनोविज्ञान, आकर्षण का है वैश्विक मान ॥10॥

इसे जानकर विश्व मानव, क्षुद्र विचार का करे अभाव।

उन्नत भाव से करे विकास, 'कनकनन्दी' की पावन आस ॥11॥

राठौड़ा, दि. 31.12.2011, रात्रि 11.30

व्यवस्थापन गीत

4. सफलता के सच्चे-अच्छे-सस्ते नियम

कार्य सम्पादन पद्धति (मैनेजमेंट के सूत्र)

-आचार्य कनकनन्दी

राग : सुनों-सुनों ऐ दुनियाँ वालों.....

सुनों-सुनों हे! मानव जाति सफलता की सच्ची पद्धति/(नियम)।

क्रमबद्ध व व्यवस्थित ज्ञान सफलता की आद्य-पद्धति/(नियम)।। (स्थायी).....

प्राथमिक व बारीक ज्ञान व्यापक रूप में होना चाहिये।

वॉर्ड विजन व एकाग्र मन से विषय बोध होना चाहिये ॥

इसी हेतु जब गुरु सिखाते कर्ण चक्षु मन एकाग्र होवे।

श्रवण दर्शन मनन द्वारा अभ्यासपूर्वक दक्षता पावे ॥.....(1)

आत्मविश्वास व धैर्यपूर्वक पुरुषार्थ भी प्रबल होवे।

उत्साह साहस लक्ष्यनिष्ठा से पुरुषार्थ में तीव्रता होवे ॥

योग्य द्रव्य क्षेत्र काल भाव कर्म समग्र साधन सहित होवे।

भूल होने पर शिक्षा लेकर सुधारपूर्वक साधना होवे ॥.....(2)

सकारात्मक विचार सह दक्षता हेतु प्रयत्न होवे।

अनुभव से प्राप्त ज्ञान को सफलता हेतु काम में लेवे ॥

भाषा गणित व सामान्य ज्ञान का यथा-योग्य सहयोग भी लेवे।

जहाँ समस्या है वहाँ समाधान इसी विषय को ध्यान में लेवे ॥.....(3)

तनाव व्यग्रता अस्थिर भाव व निराशपना त्याग भी होवे।

ईर्ष्या द्वेष घृणा असहयोग को कभी न अपने साथ में लेवे ॥

अनुशासन व क्रमबद्धपूर्ण समता-शान्ति से कार्य भी होवे।

उच्चतम की सफलता हेतु उच्चतम साधना हेतु होवे ॥.....(4)

यथा बीज से वृक्ष होने हेतु भूमि खाद वायु रश्मि चाहिये।

तथा ही सुफल प्राप्ति के हेतु समस्त उपाय योग्य चाहिये ॥

यदि है कारण न्यूनाधिक होता सफलता भी सही न मिले।

''कारण बिना कार्य न होता'' यह सत्य सूत्र सर्वथा चले ॥.....(5)

विक्षोभ तनाव उदासीनता व दीनता उपजे असफलता से।

इसी से परे अनुभव द्वारा साधनापूर्वक साध्य संवारे/(को वरे)॥
असफलता यदि मिले दैवयोगे किंकर्त्तव्यमूढ़ कभी न होवे।
असफलता के कारण जानकर उसे त्यागकर सफल होवे/(फल को पावे)॥.....(6)
संकीर्ण स्वार्थ लोभ मोह छोड़ सफल का उपयोग भी होवे।
स्व-पर-विश्वकल्याण हेतु सफल वृक्ष सम त्यागी भी होवे ॥
'कनकनन्दी' भी यह पद्धति प्रयोग करे हर क्षेत्र-काम में।
ज्ञान अनुभव समन्वय द्वारा साधना करे उच्च काम में ॥.....(7)

5. सब में स्वार्थ समाई

(भौतिक या आत्मिक स्वार्थ)

तर्ज : सबसे ऊँची प्रेम सगाई.....

बसमें स्वार्थ सदा समाई, त्यागी-वैरागी या लोभ सेठ.....सबमें.....
त्यागी का स्वार्थ आत्म वैभव, लोभी को भौतिक भाई ॥ (टेक)
चक्रवर्ती भी त्याग करे राज्य, आत्मिक स्वार्थ हेतु समाई।
सो आत्मिक स्वार्थ ही महान्, जो हेतु चक्रीत्व खोई ॥.....(1)
कोई भौतिक स्वार्थ चाहत है, आध्यात्मिक स्वार्थी कोई।
भोग को भोगी अपना माने है, त्यागी को आत्म सुहाई ॥.....(2)
मजदूर का स्वार्थ स्व-रोजगार है, मालिक का काम होता।
दाता दान से पुण्य कमाता है, पात्र भी उपकृत होता ॥.....(3)
मधुप का स्वार्थ मधु ग्रहण तो, परागण कुसुमे (में) होता।
ग्राहक का सवार्थ वस्तु प्राप्ति है, व्यापारी लाभ को पाता ॥.....(4)
गुरु का सवार्थ ज्ञानदान है (तो), शिष्य का ज्ञान को पाना।

गोपाल का स्वार्थ दूध प्राप्त है (तो), गाय का पोषण पाना ॥.....(5)
रोगी का स्वार्थ स्वास्थ्य लाभ है (तो), वैद्य का धन कमाना।
''कनकनन्दी'' का स्वार्थ आत्मलाभ, सिद्ध में आत्म स्वभाव ॥.....(6)

6. पापी से भी मैं लेता हूँ शिक्षा

राग : छोटी-छोटी गैया...

पापी से भी मुझे मिले अनेक शिक्षा...पाप न करने की विविध शिक्षा
पाप से सदा सर्वदा पतन होता...इसी से मेरी रक्षा, पाप से होता...(टेक)...
धर्मी से अनुकूल शिक्षा मिलती...पापी से प्रतिकूल शिक्षा मिलती
अस्ति-नास्ति युक्त शिक्षा पूर्णता लाती...दोनों किनारों से युक्त नदी बनती... (1)
ठोकर से शिक्षा लेता मूढ़ कुजन...अन्य की कमी से शिक्षा ले गुणी सज्जन
जलकर बचना नहीं सुज्ञान...बिना जले बचना सही सुज्ञान... (2)
नीलांजना-मृत्यु से ऋषभ हुए वैरागी...हाथी की दशा से पद्म प्रभु वैरागी
पशु हत्या से हुए नेमीनाथ वैराग्य...चार दृश्यों से बुद्ध को हुआ वैराग्य... (3)
तथाहि मुझे पापी से मिले सुज्ञान...पाप न करने का नास्तिपरक ज्ञान
अतएव पापी भी मेरा ज्ञान प्रदाता...पाप से बचने का अनुभव तरीका... (4)
यथा मद्यपायी से मिलता मुझे ज्ञान...मद्य से न नष्ट करो तन मन व धन
फैशनी से मुझे मिलता ज्ञान...व्यर्थ न गँवाओं समय व धन... (5)
बातूनी से भी मुझे मिलता ज्ञान...व्यर्थ न गँवाओं समय व मान
क्रोधी मानी भी मेरा बढ़ाये ज्ञान...व्यर्थ से न जलाओं तन व मन... (6)
प्रसिद्धि इच्छुक से शिक्षा मिलती मुझे...प्रसिद्धि हेतु न गमाऊ आत्मिक शान्ति
ज्ञान धन समय को नहीं गमाना...अहंकार को मुझे नहीं बढ़ाना... (7)
ऐसा ही समस्त पापी फैशनी व्यसनी से...खोटा भाव छोटा काम करने वालों से

कमी व तृटियों से युक्त वालों से...विभिन्न शिक्षा को पाऊँ उनसे... (8)
इसलिए उनसे न करता घृणा...समता भाव से शिक्षा लेता हूँ घणा
मधुपसम कनकनन्दी है सदा...मधुसम गुण ग्रहण में होता है मुदा... (9)

7. लोकोक्तियाँ सम्पूर्ण सत्य नहीं

राग : यमुना किनारे.....

सिद्धान्त तो सर्वथा सत्य ही होता, नीति नियम से सदाचार बनता।
लोकोक्तियाँ आंशिक सत्य भी होती, विशेष परिस्थिति में काम में आती।
कभी कदाचित् विपरीत भी होती, सतर्क भाव से मानों लौकिक नीति ॥1॥
लोकानुगतिक लोक होते हैं जन, सत्य तथ्य से अज्ञ सामान्य जन।
सर्प मूर्ति पूजते सर्प को मारे, लकीर के फकीर मूढ़ ही चले।
अनध्यवसाय से सत्य को जाने, मद्यपायी के समान उन्मत्त जाने॥2॥
कुछ लोकोक्तियों की करूँ समीक्षा, जिससे लोकनीति की होगी परीक्षा।
उपादेय ग्रहणीय हेय है त्याज्य, जिससे जीवन होगा आदर्श योग्य।
इसी हेतु वरणीय विवेक ज्ञान, रटन्त विद्या से नहीं होता सुज्ञान ॥3॥

1. जो होता है, अच्छे के लिए होता है

जो कुछ होता सब न होता सही, कुछ इष्ट कुछ नेष्ट होता भी सही।
सभी में साम्य रहना होता भी सही, मिथ्या को सही मानना उचित नहीं।
अन्याय अत्याचार (को) न मानना सही, इसी से निवृत्त होना सर्वथा सही ॥4॥
यदि सब सही होता, न होता पाप, अन्याय अत्याचार व संकट ताप।
दुःख रोग दैन्य चोरी गरीबी तृष्णा, आतंकवाद कलह युद्ध व हिंसा।
इसे दूर करने के होते न उपाय, व्यर्थ होते उपदेश धर्म व न्याय ॥5॥

2. सुनों सबकी, करो मन की

मन का ही करना भी उचित नहीं, सत्य मार्ग में चलना सर्वथा सही।
हितकर वचनों को मानना सही, मनमानी करना उचित नहीं।
यदि सही उपदेश मानना नहीं, व्यर्थ में सुनने का औचित्य नहीं ॥6॥
हितोपदेश करते तीर्थेश बुद्ध, साधु संत महात्मा ज्ञानी प्रबुद्ध।
करोड़ों मानव उसे श्रवण करे, अनेक जन उसे हिया में धरे।
आचरण भी करे गुणज्ञ जन, जिससे वे बनते महान् जन ॥7॥

3. माता कभी कुमाता नहीं होती

सन्तान कभी तो 'कु' होना सम्भव, कुमाता होना कभी नहीं सम्भव।
यह भी अविचारित रम्य ही जानो, अनेक माताएँ होती कुमाता मानो।
भ्रूण हत्या अनेक माताएँ करे, कुलटा माता बच्चों की हत्याएँ करे ॥8॥

4. जिसकी लाठी उसकी भैंस

जिसकी लाठी उसकी भैंस की नीति/(लोकोक्ति),
अन्याय अत्याचार शोषण नीति/(सही नहीं है यह शोषण नीति)।
मत्स्यन्याय सम यह जंगली नीति, तानाशाही डाकुओं की क्रूरता नीति।
न्यायोचित्त पालक की भैंस तो होती (है), हिंसक क्रूर की भैंस न होती ॥9॥

5. यथा राजा तथा प्रजा

यथा राजा तथा प्रजा सर्वथा नहीं, भजनीय दोनों होते यथार्थ सही।
कोई राजा महान् होता भी जानों, प्रजा उसकी कुछ दुष्ट भी मानों।
कंस ग्वाला राम मंथरा आदि समान, तानाशाही राजा प्रजा आदि समान ॥10॥

6. सत्य हमेशा कटू होता है

सत्य हमेशा कटू ही होता, ऐसा मानना सच्चा न होता।
सत्य तो होता शिव सुन्दर, सच्चिदानन्द व सर्व आधार।

हितमित प्रिय बोलना सत्य, व्यवहार में है नैतिक सत्य ॥11॥
सुधार हेतु जो गुरु वचन, हित सहित भी कटू वचन।
विपाक मधुर सह पथ्य वचन, आँवला सम होता श्रेय वचन।
हित रहित जो होता कटू वचन, वह न कभी होता सत्य वचन ॥12॥

7. ओल्ड इज गोल्ड

'ओल्ड इज गोल्ड' सदा नहीं होता है, कुछ ओल्ड अहितकारी होता है।
दास प्रथा सती प्रथा गोल्ड नहीं है, जीव बलि मद्यपान सही नहीं है।
सप्त व्यसन युद्ध गोल्ड नहीं है, नवीन सब कुछ होय/(बैड) नहीं है॥13॥

8. जो डर गया वह मर गया

जो डर गया वह मर तो गया, इसी में सर्वथा सत्य नहीं समाया।
सच्चा अच्छा करने में नहीं डरना, अन्याय पापों से सदा डरना।
अन्याय पापों से जो नहीं डरेगा, वह तो अन्यायी पापी बनेगा ॥14॥

9. टेढ़ी अंगुली से घी निकालना

टेढ़ी अंगुली से भले घी निकले, टेढ़ापन से सत्य शान्ति न मिले।
मन वचन काय से जो सरल होता, उसका आर्जव धर्म सही पलता।
कपट भव छिपा नहीं रहता, दुर्योधन रावण के सम मरता ॥15॥

10. जैसा अन्न वैसा मन

''जैसा अन्न वैसा मन'' आंशिक सत्य, मनानुसार भोजन अधिक सत्य।
मद्य कोई नहीं पीता बिना है मन, मद्यपान से मदमस्त होता है मन।
शाकाहारी हिप्पो भी होता है क्रूर, शाकाहारी गाय देती दूध प्रचुर ॥16॥

11. करे कोई भरे कोई

''करे कोई भरे कोई'' विचारणीय, कर्म सिद्धान्त में यह नहीं है ग्राह्य।
मद्यपी को नशा चढ़े अन्य को नहीं, ''जैसा बोये वैसा पाये'' सिद्धान्त सही।

''करे कोई भरे कोई'' न्याय भी नहीं, अन्यायपूर्ण कार्य ग्राह्य भी नहीं ॥17॥

12. यथा नाम तथा गुण

''यथा नाम तथा गुण'' सर्वत्र नहीं, नामानुसार गुण सबके नहीं।
महापुरुष होते स्वनाम धन्य, उत्तम नाम युक्त उत्तम गुण।
गरीब होता कोई श्री लक्ष्मीपति, कचरूलाल भी होता धन के पति ॥18॥

13. रात गई बात गई

''रात गई बात गई'' सर्वथा नहीं, सर्वथा विस्मरण होता भी नहीं।
रात बीतने से शान्त नहीं होती बात, रात से सभी क्या होता समाप्त।
त्याग धैर्य क्षमा से समाधान सम्भव, सूर्योदय से रात गत सम्भव ॥19॥

14. अकेली मछली सारे तालाब को गन्दा करती है

मछली एक से तालाब गन्दा न होता, एक व्यक्ति से समाज गन्दा न होता।
एक चना से भाण्ड फूटता नहीं, एक हाथ से ताली बजती नहीं।
एक पापी से सब न होते पापी, पापी का अनुकरण करते पापी ॥20॥

15. लातों के भूत बातों से नहीं मानते

लातों से न सुधरते हर मानव, साम दाम दण्ड भेद होता प्रभाव।
शल्य क्रिया नहीं होती हर रोग की, रोगानुसार दवा होती रोग की।
ईंट का जवाब सर्वत्र पत्थर नहीं, हृदय परिवर्तन से सम्भव सही ॥21॥

16. समरथ को नहीं दोष गुसाईं

समरथ को भी दोष तो लगे, कर्म न्यायाधीश दण्डित करे।
अपराध बोध से दण्ड भी भोगे, दूसरों की दृष्टि से नीचे ही गिरे।
अन्य से यदि विरोध नहीं भी झेले, प्रकृति उसका नाश अवश्य करें ॥22॥

17. आकाश-पाताल एक करना

आकाश-पाताल सब एक करना, आकाश-पाताल का अन्तर होना।

आसमान से भी बातें करना, किंकर्त्तव्यमूढ़ दिशाशून्य होना।
इत्यादि आलंकारिक लोकोक्ति जानों, सत्य तथ्य विहीन संवाद मानों ॥23॥

18. लोकोक्ति मुहावरा का कारण

भाषा की रोचकता या संकेत हेतु, संक्षिप्तिकरण या प्रेरणा हेतु।
सरलीकरण किंवा रूढ़िवशात्, मुहावरा लोकोक्तियाँ होते प्रसिद्ध।
सर्वथा पूर्ण सत्य होते ही कम, कनकनन्दी भी देता ऐसा ही मान ॥24॥

टोकर, 6.1.2012, रात्रि 11.28

8. विज्ञान के असत्य-मत तथा उससे हानियाँ

राग : यमुना किनारे श्याम.....

नित्य विज्ञान में होता अनुसन्धान-नये-नये मतों का होता निर्माण/(वर्णन)।
पुराने मतों का कुछ होता शोधन-कुछ नेष्ट-श्रेष्ठ कुछ होता जनम ॥ (1)
अज्ञ पथिक यथा आगे-आगे बढ़ता-कुछ आता-जाता कुछ मार्ग भूलता।
तथाहि विज्ञान यथा आगे-आगे बढ़ता-कुछ आता-जाता कुछ सत्य भूलता ॥ (2)
यथा अणु विखण्डन होता जा रहा-अणु के पूर्वमत क्षीण/(नष्ट, नेष्ट) हो रहा।
परमाणु प्रतिअणु बनता जा रहा-नया-नया मत भी बनता जा रहा ॥ (3)
तथा ही जीव विज्ञान विश्व ज्ञान-प्रकाश की गति व जिनोम ज्ञान।
मनोविज्ञान तथा स्वास्थ्य-विज्ञान-विज्ञानों में होता शुद्धिकरण ॥ (4)
विज्ञान भी नहीं है परम ज्ञान-अपरिवर्तनीय तथा सिद्धान्त ज्ञान।
विज्ञान तो अभी भी मार्ग पे चला-परम सत्य रूपी लक्ष्य न मिला/(पाया)॥ (5)
प्रकाश की गति को परम माना-आइन्स्टीन ने इस मत को माना।
अभी तो विज्ञान इसे नकार रहा-न्यूट्रीनों की गति अधिक पाया ॥ (6)
इसी से भी अधिक गति होती अणु की-जैन धर्म में वर्णित परम/(शुद्ध) अणु की।

यह अणु विज्ञान को नहीं है ज्ञात-सर्वज्ञ ज्ञात है, नहीं विज्ञान को ज्ञात ॥ (7)
विग्रह गति तथा सिद्धजीव की गति-न्यूट्रीनों से भी अति तीव्र गति।
विज्ञान को यह सब ज्ञात नहीं है-सर्वज्ञ ज्ञान गम्य परम गति है ॥ (8)
विज्ञान का अनुमान चल ही रहा-विश्व सृष्टि बारे में सोच ही रहा।
काल्पनिक जगत् में विचर रहा-शून्य से सृष्टि को ही ढूँढ़ रहा ॥ (9)
समय व आकाश का अभाव माना-हठात् सिंगुलरटी जन्म को माना।
शुरू में आकर शून्य चीजों को माना-वजन भी उसमें नहीं है माना ॥ (10)
बिग बैंग जब हुआ उस काल में-बोसोन हिग्स जन्मा क्षण मात्र में।
जिससे चीजों में वजन आया-आपस में तत्त्वों का सम्बन्ध हुआ ॥ (11)
जिससे सूर्यादि का जन्म भी हुआ-बोसोन विनाश क्षण में हुआ।
ब्रह्माण्ड का विस्तार हो ही रहा, चौदह अरब वर्ष प्रायः हो रहा ॥ (12)
असत्य से सत्य जन्म नहीं लेता है-शाश्वतिक यह सत्य भूला बैठा है।
मूल में ही विज्ञान की यह भूल है-वस्तु स्वरूप से यह प्रतिकूल है ॥ (13)
विश्व अनादि अनन्त तथा ही अणु-वजन से रहित है परम अणु।
स्कन्ध रूप में जब अणु बनता-चीजों/(स्कन्धों) में वजन तब प्रगट होता ॥ (14)
आकाश व कालाणु होते शाश्वत्-दोनों ही अमूर्तिक भार रहित।
आकाश का विस्तार अनन्तानन्त-आकाश/(उसके) मध्य में ब्रह्माण्ड स्थित ॥ (15)
व्यवहार समय तो भौतिक कृत-अन्तरीक्ष व्यवहार दूर सापेक्ष।
यह तो व्यवहार में होता सम्भव-आकाश काल की सृष्टि नहीं सम्भव ॥ (16)
जड़ तत्त्व से जीवों की सृष्टि मानना-यह भी विज्ञान का अज्ञानपना।
जिनोम तक जड़ तत्त्व ही जानों-जीव तत्त्व को चैतन्य ही मानों ॥ (17)
इत्यादि विज्ञान के मतानुसार-समस्त ब्रह्माण्ड है शून्य विस्तार।
विश्व में नहीं सत्य शिव सुन्दर-सच्चिदानन्दमय आत्म विचार ॥ (18)

इसी से मानव क्षुद्र/(संकीर्ण) स्वार्थी बनेगा-भौतिकमय विचार उसका होगा।
खाओ-पीओ मजा करो यह करेगा/(मानेगा)-मरण अनन्तर कुछ नहीं रहेगा ॥ (19)
पवित्र आध्यात्म भाव लोप होवेगा-आत्म विकास का भाव शून्य/(लोप) होयेगा।
सुख-दुःख सहिष्णुता भाव न होगा-हानि-लाभ में समभाव न होगा।
परलोक विकास का भाव न होगा-आत्मा में परमात्मा भान न होगा ॥ (20)
इसी से अनेक अनर्थ उत्पन्न होंगे-धर्म अर्थ काम मोक्ष नहीं सधेंगे।
कर्म सिद्धान्त का विनाश होगा-पाप-पुण्य परलोक नहीं रहेगा ॥ (21)
असत्य अन्याय पापाचार बढ़ेगा-युद्ध हिंसा भ्रष्टाचार खूब बढ़ेगा।
शील सदाचार संयम भाव न होगा-परम सत्य का शोध-बोध न होगा ॥ (22)
सत्य-तथ्य नैतिक व आत्मदृष्टि से-विज्ञान ग्राह्य नहीं सूक्ष्म दृष्टि से।
विज्ञान के सत्य पक्ष ग्रहणीय है-'कनक' द्वारा सत्य वन्दनीय है ॥ (23)

राठौड़ा, दि. 29.12.2011, रात्रि 1.48

9. भाग्य एवं पुरुषार्थ स्वरूप एवं फल

राग : चौपाई.....

पुरुषार्थ-भाग्य सापेक्ष जानों-जनक जन्य भी दोनों ही मानों।
परस्पर सहयोगी दोनों बनते-एक-दूसरों का विरोध करते ॥ (टेक)॥
पुरुषार्थ से भाग्य निर्माण होता...भाग्य से पुरुषार्थ प्रेरित होता।
कालादि बाह्य निमित्त होते...स्वभाव नियति सहयोगी होते ॥ (1)
भाव ही प्रमुख पुरुषार्थ होता...जिससे कर्म का निर्माण होता।
भाव अशुभ-शुभ-शुद्ध होता...पाप-पुण्य व मोक्ष के दाता ॥ (2)
कर्त्तव्य चारित्र उद्योग कार्य...पुरुषार्थ के होते पर्याय।
द्रव्य भाव रूपी अष्टविध कर्म...भाग्य विधाता ये सर्व कर्म ॥ (3)

राग-द्वेष-मोह अशुभ भाव...जिससे पाप का होता उद्भव।
पाप जन्य होता अशुभ भाव...जिससे कर्म होता है अशुभ ॥ (4)
यह चक्र सतत् चलता रहता...जब तक शुभ भाव नहीं होता।
शुभ से अशुभ का नाश होता...शुभ से शुद्ध का विकास होता ॥ (5)
अशुभ से पाप बन्धन/(अर्जन) होता...पाप उदय से कुभाव/(कुकार्य) होता।
कुभाव से खोटा कर्म होता...जिससे कर्त्ता दुःख को पाता॥ (6)
क्रोध मान माया लोभ जानों...हिंसा झूठ चोरी परिग्रह मानो।
अब्रह्म व सप्त व्यसन...अष्ट मद सब पाप ही जानो ॥ (7)
अधिक पापी जो जीव होता...सुपुरुषार्थ से वञ्चित होता।
अतएव पुण्य आद्य करणीय...जिससे पुरुषार्थ होता वरणीय ॥ (8)
पाप से विपरीत शुभ होता...पूजन भजन पुण्य होता।
परोपकार सेवा शुभ होता...दयादान व्रत पुण्य होता ॥ (9)
शुभ से पुण्य का अर्जन होता...जिससे उत्तम तन मिलता।
भाव-व्यवहार पावन होता...जिससे कर्त्ता को सुख मिलता ॥ (10)
सुभाव का जब विकास होता...पुण्य का विकास अधिक होता।
मोह माया त्यागी साधु बनता...आत्म साधना से पाप नाशता ॥ (11)
आत्म पुरुषार्थ प्रबल होता...आत्म ध्यान से कर्म नाशता।
सर्व भाग्य का नाश करता...सच्चिदानन्द स्वरूप होता ॥ (12)
भाग्य का निर्माता पुरुषार्थ होता...पुरुषार्थ से भाग्य नाशता।
अतएव पुरुषार्थ भाग्य से श्रेष्ठ...'कनकनन्दी' को यह ही इष्ट ॥ (13)

राठौड़ा, दि. 31.12.2011, मध्याह्न 2.31

10. ईर्ष्या की आत्म-कथा एवं निवेदन

(ईर्ष्या के कारण-परिणाम एवं निवारणोपाय)

राग : 1. छोटू मेरा नाम है... 2. पूछ मेरा क्या नाम रे...

ईर्ष्या मेरा नाम है जलन मेरा काम है।

हीन ग्रन्थी वाले मानव को जलाना मेरा काम है ॥(टेक/स्थायी)॥

जो स्वयं को हीन माने अन्य को माने पराया।

वह है मेरा जन्मदाता जन्मदाता मेरा निराला ॥ (1)

संकीर्ण रूढ़िवादी धार्मिक सत्ता-सम्पत्ति सम्पन्न।

बुद्धिमान व यशकामी जन देते अधिक जन्म ॥ (2)

मेरा जनक जब दूसरों की प्रगति प्रसिद्धि देखता है।

सच्चाई व अच्छाई देखकर मुझे जन्म देता है ॥ (3)

जन्मदाता को ही मैं जलाती भस्मासुर सम काम है।

अग्नि सम भी मैं जलाती जन्म स्थान समान है ॥ (4)

जन्मदाता में उत्पन्न करती वैरभाव व तुच्छता।

कुण्ठा मलिनता अशान्ति पीड़ा हीनता दीनता दुष्टता ॥ (5)

विभिन्न दैहिक मानसिक रोग उत्पन्न होते हैं पिता में।

स्नायविक दबाव, तनाब, दौर्बल्य अवसाद हताशा चित्त में ॥ (6)

उच्च रक्तचाप, अनिद्रा, अपच मन्दाग्नि, पित्त विकार।

पथरी, दाह, नपुंसकता, बादी विविध रोग व विकार ॥ (7)

इसीलिये केवली, गणधर, साधु मुझे न करते उत्पन्न।

अतः वे शान्त सुखी होते सर्व जीवे मैत्री सम्पन्न॥ (8)

इन्हीं के समान समता जो रखे करे जो आत्म चिन्तन।

विश्वमैत्री की भावना भाये वे न करे मुझे उत्पन्न॥ (9)

अतः जो सुख स्वास्थ्य चाहते करो न मुझे उत्पन्न।

'कनकनन्दी' की कविता द्वारा मैं करूँ सर्वे निवेदन॥ (10)

टोकर, दि. 12.1.2012, रात्रि 2.08

11. कर्म-सिद्धान्त तथा मोक्ष-उपाय

(करण (परिणाम/भाव) से कर्म के दशविध-करण)

सुनो-सुनो हे! मोक्ष इच्छुक कर्म नाश के सच्चे उपाय।

इसे जानकर उपाय करो जिससे कर्म का होगा विलय/(विनाश) ॥टेक॥

राग-द्वेष व मोह के कारण अष्ट-दुष्ट कर्मों का होता बन्धन।

इससे विपरीत भाव से होते दुष्ट-अष्ट कर्म निधन ॥ (1)

पश्चाताप प्रायश्चित्त व्रत तप ध्यान से कर्मों का होता क्षरण।

द्रव्य क्षेत्र काल भाव कारण भी इसी हेतु तो होते कारण ॥ (2)

संसार-मोक्ष इसीसे बनते सर्व दुःख-सुख के ये ही कारण।

इसी का कर्त्ता हर जीव होता कर्त्ता ही भोक्ता फल निदान ॥ (3)

बन्ध उत्कर्षण-अपकर्षण संक्रमण उदीरणा सत्त्व व उदय होते।

उपशम निधत्ति निःकाचन सह दशविध करण कर्मों के होते ॥ (4)

इसी के लिए तीन करण भी प्रमुख कारणभूत है होते।

अधः प्रवृत्त अपूर्वकरण अनिवृत्तिकरण नामक होते ॥ (5)

शुभाशुभ शुद्ध भाव भी होते जिससे दशविधकरण होते।

अष्ट प्रकृति में होते दशकरण उत्तम कर्मों में विशेष होते ॥ (6)

योग से कर्मों का आस्रव होता मन वचन काय कम्पन्न होता।

मोह कषायों से बन्धन होता प्रकृति प्रदेश स्थिति अनुभव होता ॥ (7)

अशुभ वृद्धि से होता पाप उत्कर्षण अग्नि वृद्धि यथा घृत वृद्धि से।

शुभ वृद्धि से होता पुण्य उत्कर्षण मीठा वृद्धि यथा चीनी वृद्धि से ॥ (8)

पापी यदि सोचता मैंने जो पाप किया अच्छा ही किया।

पाप उत्कर्षण उसका हुआ अपकर्षण भी पुण्य का हुआ ॥ (9)

पापी यदि सोचता मैंने जो पाप किया अच्छा न किया।

पाप अपकर्षण उसका हुआ उत्कर्षण पुण्य का किया ॥ (10)

श्रेणिक यथा पश्चाताप से सप्तम् नरक से प्रथम गया।

पुण्यकर्म हेतु पश्चाताप करे उच्च देव से नीचे ही आया ॥ (11)

भाव शुद्धता से होता संक्रमण यथा केवली के पाप भी पुण्य।

मिथ्यादृष्टि यदि पुण्यात्मा हो गया पाप भी हो जायेगा पुण्य ॥ (12)

उदीरणा होती तपस्या द्वारा पापकर्मों का काल पहले।

अकाल मृत्यु में आयुकर्म का उदीरणा होती काल पहले ॥ (13)

बन्ध अनन्तर उदय पहले कर्मों की होती सत्त्व/(सत्ता) अवस्था।

सत्त्व/(सत्ता) में होती उत्कर्षण संक्रमण अपकर्षण आदि अवस्था ॥ (14)

फलपाक सम उदय होता कालसापेक्ष व पुरुषार्थापेक्षा।

सपाक निर्जरा अपाक निर्जरा स्वयंपाक या पुरुषार्थापेक्षा/(तपस्यापेक्षा) ॥ (15)

सपाक निर्जरा कर्मबन्ध हेतु अपाक निर्जरा मोक्ष के हेतु।

इसी हेतु ही धर्म करणीय अनन्त सुख प्राप्ति के हेतु ॥ (16)

उपशम भाव उपशम हेतु जिससे न मिले कर्म का फल।

उपशम से क्षयोपशम व अन्त में मिलता क्षायिक फल ॥ (17)

निधत्ति है कर्म विशेष जो न उदयावली में होता निक्षेप।

संक्रमण भी न होता अन्य में कठोरतर है कर्म मध्य में ॥ (18)

निकाचित है कठोरतम कर्म निधत्ति से भी आगे भी जानो।

उत्कर्षण भी न होता इसी में ऐसा है वज्र समान मानो ॥ (19)

तथापि इसी में अपवाद होता जब जिनबिम्ब दर्शन होता।

वज्रपात से गिरि नाश सम दोनों कर्म का विनाश होता ॥ (20)

जिनेन्द्र दर्शन भाव से करता/(होता) मिथ्यात्व का भी नाश करता/(होता)।

जिन दर्शन से निज का ज्ञान जब नयापेक्षा सच्चा करता/(होता) ॥ (21)

यथा सुयोग्य बीज बनता सर्व संयोग/(समन्वय) से महान् वृक्ष।

तथा दशविध कर्म-अवस्था सर्वयोगे क्षय से मोक्ष ॥ (22)

भव्य ही सर्व अवस्था पाये कर्म सहित परे भी मोक्ष।

अभव्य कर्म अवस्था पाये वञ्चित रहे सर्वथा मोक्ष ॥ (23)

पुरुषार्थ तो प्रधान होता कर्म/(बन्ध) करणे या मोक्ष प्रयाणे।

काल स्वभाव नियति कर्म यथा-योग्य मुख्य गौण प्रमाणे ॥ (24)

प्रबल कर्म जब उदय में होता तब न भाव भी होता निर्मल/(प्रबल)।

तथाहि प्रबल द्रव्य क्षेत्र भी प्रभाव डालते अनुपात में ॥ (25)

अयोग्य क्षेत्र काल योग से योग्य न भाव होता सम्भव।

स्वर्ग नरक से न होता मोक्ष तथा ही जानों छट्टा काल में ॥ (26)

हर कार्य में अनेकान्त है संसार भ्रमण अथवा मोक्ष।

निरपेक्ष से कुछ न होता सत्य-असत्य, बन्ध या मोक्ष ॥ (27)

आगम तर्क अनुभव उदाहरण सह गाया गया यह गीत/(पद्य)।

'कनकनन्दी' तो मोक्ष ही चाहे इसी हेतु कहा बन्ध व मोक्ष ॥ (28)

टोकर, दि. 13.1.2012, रात्रि 12.12

(आ. पद्मनन्दी के अनुरोध से यह कविता बनी)

12. भारतीयों में सत्य को मानने का सत्-साहस नहीं

राग : छोटी-छोटी गैया...

भारतीयों में सत् साहस नहीं...सत्य को मानने की क्षमता नहीं।
रूढ़ि परम्परा या विदेशी नकल/(करण)...देखादेखी बहाव में बहते सही।
पूर्वकृत कुकृत तथा दीर्घ गुलामी...सच्ची शिक्षाविहीन संस्कार नहीं ॥ (1)
इसी के कुछ उदाहरण प्रस्तुत करूँ...विस्तार से ग्रन्थों में वर्णन करूँ।
विदेशों से आर्यों का यथा आगम...पूर्व में देश में थे अनार्य जन।
पाँच हजार वर्ष की आर्य संस्कृति...पूर्व में थी भारत में म्लेच्छ संस्कृति ॥ (2)
आर्य (देश) भारत म्लेच्छखण्ड हो गया...भारतीय आर्यों का लोप हो गया।
अधिसंख्य तीर्थंकर म्लेच्छ हो गये...श्रीराम कृष्ण आदि लोप हो गये।
विश्वगुरु भारत नीच हो गया...ज्ञान-विज्ञान सब मिथ्या हो गया ॥ (3)
हमारी संस्कृति है अति महान्...स्व-पर-विश्व कल्याणी अमृतपम्।
तन-मन-आत्मा को सुख/(शान्ति)दायिनी...सत्यं शिवं सुन्दरं सर्व कल्याणी।
तथापि भौतिकता को अपना रहे...विभिन्न कष्टों को भोग भी रहे ॥ (4)
संस्कृत हमारी संस्कृति भाषा...भारतीय भाषाओं की जननी भाषा।
ज्ञान प्रबोधिनी प्राञ्जल भाषा...सर्वज्ञान दायिनी प्राचीन भाषा।
मातृभाषा का अनादर कर रहे है...गुलामी भाषा को ढो रहे हैं ॥ (5)
हमारे महापुरुष आदर्श होते...महान् गुणों से सहित होते।

हमारे अनुकरणीय उनके गुण...आदर्श बनने हेतु प्रथम गुण।
अभी तो हीरो-हीरोईन हुए आदर्श...फैशन-व्यसन हेतु सही आदर्श ॥ (6)
हमारा भोजन होता सात्त्विक शुद्ध...शाकाहार फलाहार प्रासुक दूध।
तो भी तामसिक अशुद्ध खाना खाते...बाजारू व मिलावटी खाद्य खाते।
माँस अण्डा मछली भी खाना खाते...धन स्वास्थ्य धर्म शान्ति हराते ॥ (7)
धर्म अर्थ काम भी मोक्ष युक्त...चक्रवर्ती भी त्यागता संसार सुख।
अभी तो केवल संसार सुख ही रहा...चारों पुरुषार्थ अर्थमय हो गया।
जिससे भ्रष्टाचार बहुविध हो रहा...बहुविध समस्याओं के भोग रहा ॥ (8)
संयम सदाचार आत्मानुशासन...धैर्य क्षमा सहिष्णुता आत्म-विज्ञान।
आर्य संस्कृति के ये मुख्य लक्षण...विश्व गुरुत्व की मुख्य पहिचान।
अभी तो इससे विपरीत हो रहा...सर्वत्र देश का अपमान हो रहा ॥ (9)
चारों आश्रमों से युक्त जीवनचर्या...जीवन-मरण व मोक्ष की कला।
व्यवस्थित क्रमबद्ध विकास यात्रा...आत्मा से परमात्मा विकास यात्रा।
अभी तो अस्त-व्यस्त घर रह गया...समाज भी संत्रस्त भीड़ रह गया ॥ (10)
वैश्विक कुटुम्ब हमारा लक्ष्य भी रहा...वैश्विक शान्ति हेतु प्रयास रहा।
अभी तो पेट व पेटी लक्ष्य हो गया...परिवार भी परायाजन हो गया।
संकीर्ण स्वार्थ हेतु मरा जा रहा...दूसरों को मारकर खाता जा रहा ॥ (11)
मोक्ष की यात्रा अभी लोप हो गई...अन्धी दौड़ में अपमृत्यु हो रही।
सिद्धि नहीं प्रसिद्धि मुख्य हो गई...साधना भी धन-जन हेतु हो गई।
आध्यात्मिक साधना लोप हो रही...सांसारिक साधना की बाढ़ आ गई ॥ (12)
भौतिकवादी ज्ञानी सत्यग्राही हो रहा...धार्मिकजन रूढ़िवादी हो रहा।
हमारी संस्कृति पाश्चात्य मान रहा...कुसंस्कृति भारत जन मान रहा।
विश्वगुरु भारत बन रहा है दास...स्वतन्त्र भारत बना बौद्धिक दास ॥ (13)
तो भी अभी हर क्षेत्र में...होते हैं महान् जन।

संख्या में भले कम होते...तो भी होते वे महान् ॥
उनके कारण आज बचा है...भारतीय ज्ञान-विज्ञान।
दीप स्तम्भ सम अन्धकार में...बने है प्रकाशवान् ॥
उनसे शिक्षा ग्रहण कर बने...भारत पुनः महान्।
इसी हेतु श्री 'कनकनन्दी'...कर रहा यत्न महान्॥...प्रभुजी...॥ (14)

13. बड़े आदमी की अजीब कहानी

बड़े आदमी की समस्या-कारण एवं निवारण

सुनों-सुनों हे दुनियाँ वालों...बड़े आदमी की अजब कहानी।
सत्ता-सम्पत्ति-प्रसिद्धि डिग्री...युक्त वालों की गजब कहानी ॥टेक॥
ऊपर से तो चमक-दमक...दूर से लगे भी मनमोहक।
यथा समुद्र पहाड़ नाग...इन्द्रधनुष व विद्युत पात/(मेघ तड़ाग)॥
पापानुबन्धी पुण्य कर्म से...प्राप्त होती जब सत्ता सम्पत्ति।
किंपाक फल सम लगे मनोहर...स्वाद में मधुर विपाक जहर ॥
सत्तादि प्राप्त करने हेतु...करते कर्म अति दुष्कर।
उनकी रक्षा व वर्धन हेतु...करते पुनः पाप आचार ॥
प्राप्त होने से बढ़ता गर्व...फैशन-व्यसन भोगते सर्व।
जिससे रोग-तनाव बढ़े...परेशानी और संकट घेरे ॥
अन्याय अत्याचार करते...ईर्ष्या द्वेष घृणा करते।
तृष्णा मोहवश पाप करते...युद्ध, हत्या, बलात्कार करते ॥
शोषण भ्रष्टाचार करते...धोखाधड़ी बेईमानी करते।
नरकमय जीवन बिताते...आत्महत्या कर जीवन देते ॥
निवृत्ति उपाय इसके सुनो...निर्मल भाव दया को जानो।

आत्म नियंत्रण सुध्यान-ज्ञान...सात्विक आहार-विचार मानो ॥
संतोष क्षमा धैर्य संयम...विश्वमैत्री व विश्वकल्याण।
पर दुःख कातर दर्याद्र मन...जिससे न होते अयोग्य काम ॥
ये ही उपाय यथार्थ जानो...पुलिस कानून आंशिक/(बाह्य) मानो।
डॉक्टर औषधि बाह्य कारण...हितोपदेशी गुरु सज्जन ॥
शान्ति ही सबसे बड़ी सफलता...शान्ति हेतु ही बने सफलता।
इसी हेतु यह रचना हुई...'कनकनन्दी' की भावना ये ही ॥

गीताञ्जली धारा-9 की प्रथम रचना

राठौड़ा, दि. 22.12.2011, रात्रि 9.44

14. ख्याति पूजा लाभ की कामना : निदान आर्तध्यान

(निदान से मिथ्यात्व भाव)

राग : यमुना किनारे श्याम.....

निदान भाव को जिया किया न करो दुःखकर आर्तध्यान ध्याया/(किया) न करो।
इसीसे मिथ्यात्व भाव अवश्य होता ख्याति पूजा लाभ का भाव जो होता।
इसीसे संयम भाव विनष्ट होता मिथ्यात्व गुणस्थान में पतित होता ॥ (टेक)
निदान भाव से जो पुण्य करता सांसारिक लाभ/(भोग) हेतु धर्म करता।
भक्त नहीं भिखारी का भाव धरता पापानुबन्धी पुण्य वह बान्धता।
इन्द्रयोग्य पुण्य को क्षय करता नीच देव में वह उत्पन्न होता ॥(1)॥
तीर्थंकर बनने का निदान करे प्रसिद्धि प्राप्ति हेतु निदान करे।
यह भी आर्तध्यान सहित जान प्रसिद्धि प्राप्ति हेतु किया निदान।
उत्तम शरीर चाहे मोक्ष के हेतु निदान नहीं यह प्रशस्त हेतु ॥(2)॥
दुक्खक्खओ कम्मक्खओ भाव करना निदान नहीं यह शुभ भावना।

मोक्ष प्राप्ति हेतु जो होती भावना प्रशस्त हेतु वह शुभ भावना।
सांसारिक ख्याति पूजा हेतु भावना निदान आर्तध्यान मिथ्या भावना ॥(3)॥
अज्ञान मोहवश जो जीव होता उसके निदान भाव सहज होता।
प्राथमिक रम्य यह मीठा जहर मोही को लगे यह प्रिय मनोहर।
भिक्षा से चक्रवर्ती बनना चाहे कालकूट भक्षण से आरोग्य चाहे ॥(4)॥
आर्तध्यान का लक्षण सुनो सृजन शंका भय चिन्ता और पागलपन।
व्याकुलता भ्रान्ति तथा भोगलालसा प्रमाद कलह तथा अति लालसा।
परिश्रम मूर्च्छा तथा तृष्ण भी अति तनाव जड़ता व निद्रा भी अति ॥(5)॥
निदान रहित धर्म किया ही करो इहलोक परलोक सुख को वरो।
निदान से पुण्य को क्षय न करो इहलोक परलोक दुःख न भरो।
भोगाकांक्षा रहित है कनकनन्दी सर्वधर्म कर्म मेरा आध्यात्मनन्दी ॥(6)॥

राठौड़ा, दि. 1.1.2012, मध्याह्न 2.45

15. क्षीण होता जा रहा है भारत ज्ञान-त्याग-शील से

राग : कौन परदेशी मेरा दिल ले गया.....

आज महान् भारत को क्या हो गया...ज्ञान-त्याग-शील में क्षीण हो गया।
रटन्त ज्ञान अनुभव विहीन...अव्यवस्थित तथा सार विहीन ॥
जीवन उपयोगी नहीं है ज्ञान...नहीं होता है सही प्रारम्भ ज्ञान।
ज्ञान का साधन होता शब्द विज्ञान...शब्द ज्ञान बिन कहाँ परम ज्ञान ॥
ज्ञान-विज्ञान हेतु गणित ज्ञान...लौकिक गणित तक नहीं है ज्ञान।
अलौकिक गणित तो महान् ज्ञान...उससे अपरिचित अधिक जन ॥
जिज्ञासु गुण भी कम होता जा रहा...डिग्री मनोरंजन तक ज्ञान रह गया।
संकीर्ण पंथ मत स्वार्थ हो गया...उदार व्यापक ज्ञान क्षीण हो गया ॥

चुटकुला-सास-बहू कथा ही भाती...निन्दा हास्य परिहास कथा सुहाती।
जीवन निर्माण कथा में नहीं रूचि...नैतिक शिक्षा बिना गप्प में रूचि ॥
आध्यात्मिक ज्ञान रूढ़िवादी हो गया...आत्मसाधना बिन पंथवादी हो गया।
अहं धूर्त पाखण्ड का पाठ हो गया...धनजन भोग ही साध्य हो गया ॥
प्राचीन आधुनिक ज्ञान भी नहीं...सामान्य सदाचार का भान भी नहीं।
आत्मा-परमात्मा को जानते नहीं...आधुनिक महाज्ञानी मानते सही ॥
ज्ञान का मूल्यांकन धन से होता...भीड़ के अनुसार ज्ञान चलता/(बँटता)।
मान प्रदर्शन हेतु ज्ञान हो गया...जानकारी ही ज्ञान का मान हो गया ॥
गाना-नाचना ही धर्म हो गया...भीड़ से धर्म का मान हो गया।
आध्यात्मिक भाव लोप हो रहा...प्रतिस्पर्द्धा का भाव बढ़ ही रहा ॥
त्याग करना तो अति दूर ही रहा...भ्रष्टाचार संग्रह में मस्त हो रहा।
हर क्षेत्र में तो स्वार्थ हो रहा...धन या मान का स्वार्थ हो रहा ॥
निःस्वार्थ भाव तो लोप हो रहा...समय श्रमदान ना हो रहा।
त्याग तप में भी स्वार्थ हो रहा...धन जन मान हेतु त्याग हो रहा ॥
शील-सदाचार का तो लोप हो रहा...फैशन-व्यसनों में डूब-सा गया।
दिखावा व आडम्बर खूब हो रहा...सत्य-न्याय का पथ भूल-सा गया ॥
सहज-सरल भाव वक्र हो रहा...बगुला के समान शुभ्र हो रहा।
सूट-बूट-टाई व्यक्तित्व हो गया...दर्जी से व्यक्तित्व निर्माण हो रहा ॥
उद्दण्ड व अश्लील से बोल्ड हो रहा...भ्रष्टाचार के धन से विकास कर रहा।
विकास का पैमाना भौतिक हो रहा...आत्मपतन का भान न रहा ॥
कमियों के शोध-बोध, त्याग के हेतु...कविता ये रची गई विकास हेतु।
'कनकनन्दी' की यह शुभ भावना...समग्र विकास हो ये ही कामना ॥

राठौड़ा, दि. 28.12.2011, रात्रि 8.52

16. विश्व के हर कण से ज्ञान मिलता

(ज्ञान-ज्ञेय मीमांसा)

(शकुन-स्वप्न-शरीर (सामुद्रिक लक्षण) ज्ञान से लेकर अनन्त ज्ञान तक के ज्ञान-ज्ञेय सम्बन्ध)

तर्ज : 1. वन्देमातरम्..... 2. अच्छा सिला.....

विश्व के हर कण से ज्ञान मिलता, योग्य जीव को ही ज्ञान मिलता।
अयोग्य ज्ञान न लेता दिव्य ध्वनि से, पात्रता के अनुसार ज्ञान मिलता ॥ (1)

ज्ञेय प्रमाण ज्ञान कहा आगम, प्रमेयत्व गुण से होता है ज्ञान।
ज्ञान-ज्ञेय सम्बन्ध इसे कहते, वाच्य-वाचक सम्बन्ध समान होते ॥ (2)

ज्ञान गुण आत्मा में जब होता प्रगट, ज्ञेय वस्तु का ज्ञान होता प्रगट।
स्वच्छता गुण जब प्रगट होता, दर्पण में प्रतिबिम्ब तब पड़ता ॥ (3)

क्षयोपशम से प्रारंभ (लेकर) क्षय पर्यन्त, ज्ञानावरण कर्म का होता विशेष।
वीर्यान्तराय कर्म का तथाहि जानो, ज्ञान प्राप्ति के प्रमुख कारण मानो ॥ (4)

छद्मस्थ योग्य बाह्य कारण होना चाहिए, इन्द्रिय मन प्रकाश होना चाहिए।
योग्य गुरु सहयोग होना चाहिए, सर्वज्ञ के लिए यह नहीं चाहिए ॥ (5)

कार्य-कारण सम्बन्ध से ज्ञान भी होता, उपादान-निमित्त से तथा ही होता।
क्रिया-प्रतिक्रिया से ज्ञान भी होता, कर्मजन्य भावों से ज्ञान भी होता ॥ (6)

गुण द्रव्य पर्याय से ज्ञान भी होता, उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य से ज्ञान भी होता।
प्रमाण-नय-निक्षेप से ज्ञान भी होता, अनेकान्त सापेक्ष (स्याद्वाद) से ज्ञान भी होता ॥ (7)

अष्टांग निमित्तों से भी ज्ञान होता, ज्ञान/(बुद्धि) ऋद्धि से भी विशिष्ट होता।
मतिश्रुत अवधि से ज्ञान भी होता, मनःपर्यय से मन-विज्ञान होता ॥ (8)

केवलज्ञान होता आत्मिक (आध्यात्मिक) ज्ञान, अक्षय-अनन्त-सर्वज्ञ ज्ञान।
त्रिकालवर्ती सर्व होता विज्ञान, बाह्य निमित्त बिन आत्मोत्थ ज्ञान ॥ (9)
ज्ञान-ज्ञेय सम्बन्ध होता सर्वत्र, अन्यान्य सम्बन्ध जानो सर्वत्र।
ज्ञान हो तो ज्ञेय होगा ज्ञेय तो ज्ञान, परस्पर सम्बन्ध है यह विधान ॥ (10)
ज्ञान स्व-पर प्रकाशी दीप समान, ज्ञान स्वयं ज्ञेय तथा जानो है ज्ञान।
ज्ञान-ज्ञेय अवस्था में चेतन ज्ञान, ज्ञेय अचेतन या जानो चेतन ॥ (11)
चेतन (या) अचेतन को जानता ज्ञान, अचेतन ज्ञेय सदा न होता ज्ञान।
चेतन जीव ही ज्ञान-ज्ञेय होता है, अचेतन द्रव्य सदा ज्ञेय होता है ॥ (12)
प्रतिबिम्ब यथा पड़े दर्पण मध्ये, योग्य द्रव्य का योग्य क्षेत्र सम्बन्धे।
तथाहि ज्ञान-ज्ञेय होता सम्बन्ध, योग्य-ज्ञान-ज्ञेय में यह सम्बन्ध ॥ (13)
अतएव ज्ञान को करो विकास, स्वयं ज्ञेय ज्ञात होगा सत्य अशेष।
ज्ञान विकास हेतु एकाग्रमन, स्वाध्याय मनन व पावन ध्यान ॥ (14)
सत्याग्राही सनम्र व निर्मल मन, सहज-सरल व शान्त हो मन।
ईहा आवाय धारणायुक्त हो ज्ञान, सूक्ष्म अनुभव से बढ़ेगा ज्ञान ॥ (15)
तनाव दुश्चिन्ता प्रमाद त्याग, सतत अभ्यास का हो प्रयोग।
जिसी से ज्ञान-ज्ञेय सहज होता, इसी हेतु 'कनक' तो सजग सदा ॥ (16)

टोकर, दि. 16.1.2012, रात्रि 10.17

17. आत्मोद्धार करो : आत्महत्या त्यागो

-आचार्य कनकनन्दी

तर्ज : यमुना किनारे.....

आत्महत्या मानव किया न करो, मानव जन्म को व्यर्थ न करो।
आत्महत्या से आत्म पतन होता, इहलोक परलोक दोनों नशता।
इसी से समाधान होता भी नहीं, दुःख दारिद्रय भय (संकट) मिटते नहीं ॥ (टेक)
पूर्वकृत कर्म से दुःखादि आते, समता से सहने से क्षीण (दूर) भी होते।
आलोचना प्रायश्चित्त व्रतादि द्वारा, स्वयं को सही करो विवेक द्वारा।
निंदा अपमान से शिक्षण ले लो, संसार की विचित्रता विचार करो ॥1॥
आत्महत्या से यदि दूर रहोगे, आदर्श जीवन हेतु कार्य करोगे।
इह-परलोक सुखमय बनेंगे, जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करोगे।
आत्महत्या से यह संभव नहीं, नष्ट बीज से वृक्ष बनता नहीं ॥2॥
परीक्षा में फैल या कम अंक लाने से, प्रेम में असफल या विरह होने से।
व्यापार में फैल या कर्जदार होने से, रोग तनाव कलह प्रियमृत्यु (होने) से।
विक्षुब्धादि हेतु से आत्महत्या करते, विद्यार्थी साक्षर युवा, धनी करते ॥3॥
संक्लेश भाव से आत्महत्या होने से, घोर पाप का बन्ध होता आत्मा में।
इसी से नीच गति में जनम होता, अधिक दुःखमय जीवन होता।
क्षुधा मिटाने हेतु विषपान सम, प्यास न मिटे दुःख होता निदान ॥4॥
पलायनवादी सम लक्ष्य न धरो, कायर के समान काम न करो।
गेंद के समान महागुण को धरो, घात-प्रतिघात से विकास करो।
ताप ताडन से भी आदर्श बनो, अशुद्ध सोना से कनक बनो ॥5॥
यदि जीवन का समर्पण चाहते, सांसारिक सम्बन्ध भी अच्छे न लगे।
आत्म कल्याण हेतु कर ये काम, मोह-माया त्यागकर बनो निष्काम।

मोक्ष प्राप्ति हेतु करो कठोर तप, जिसी से समस्त दुःख होंगे निःशेष ॥6॥
आत्महत्या तो होती महान हिंसा, आत्म-उद्धार करो महा-अहिंसा।
सच्चिदानन्द है आत्म स्वभाव, अमृतमय है जिन-स्वभाव।
उसके हेतु ही हो प्रयास, ''कनकनन्दी'' करे सत् प्रयास ॥7॥

टोकर, दि. 14.1.2012, प्रातः 8.53
(यह कविता आचार्य पद्मनन्दी के अनुरोध से बनी)

18. षट् गुण हानि वृद्धि (एकीकृत सिद्धान्त)

चौपाई :

षट् गुण हानि वृद्धि पहिचानो, शुद्ध द्रव्यों का स्वरूप जानों।
अगुरुलघु गुण इसी के कारण, शुद्ध द्रव्यों में होता हर क्षण ॥1॥
अगुरुलघु गुण के ही कारण, एक गुण न होता अन्य गुण।
उत्पाद व्यय ध्रौव्य होने पर भी, द्रव्य न विनष्ट होता कभी भी ॥2॥
यथा समुद्र में तरंगें होती/(आती), उत्पन्न होती विलय होती।
जलराशि समुद्र की समान रहती, हानि वृद्धि में भी समान रहती ॥3॥
यह सब सर्वज्ञ ज्ञान गोचर, छद्मस्थ द्वारा नहीं गोचर।
तर्क से अखण्डित नहीं गोचर, आज्ञा सिद्ध ग्राह्य यह विचार ॥4॥
स्वभाव गुण पर्याय ये गुण जानो, अनन्त अविभाग प्रतिच्छेद मानो।
सूक्ष्म अर्थ पर्यायमय जानो, प्रतिसमय परिणमन मानो ॥5॥
रत्न ज्योति यथा हानि वृद्धि होती, रत्न की स्थिति तथावत् होती/(रहती)।
रत्न न छोटा बड़ा भी होता, तथाहि द्रव्यों में यह सब होता ॥6॥
अनन्त भाग वृद्धि असंख्यात वृद्धि, तथाहि संख्यात भाग वृद्धि।
संख्यात गुण वृद्धि असंख्य वृद्धि, अनन्त वृद्धि युत षट् वृद्धि ॥7॥

अनन्त भाग हानि असंख्य हानि, तथाहित संख्यात भाग हानि।
संख्यात गुण हानि असंख्य हानि, अनन्त हानि युत षट् होती हानि ॥8॥
यह गुण इलास्टिक सम जानो, हानि वृद्धि में समान मानो।
स्थिति स्थापकत्व इसी से होता, विस्मयकारी यह गुण होता ॥9॥
प्रतिच्छेद में हानि वृद्धि होती, अविभागी शक्त्यांश प्रतिच्छेद होती।
अनन्त प्रतिच्छेद जब वृद्धि होती, अनन्त गुण वृद्धि तब ही होती ॥10॥
ऐसा ही अन्य हानि वृद्धि (में) जानो, सर्वज्ञ द्वारा उपदिष्ट मानो।
इसी से द्रव्य बिखरता नहीं, यह सब वर्णन मतान्तरे नहीं॥11॥
विज्ञान (है) अभी तो शोधरत, एकीकृत सिद्धान्त रूप में रत।
परिकल्पनामय विज्ञान मत, समस्त/(पूर्ण) ब्रह्माण्ड में जो अनुसृत ॥12॥
विज्ञान को भी नहीं है ज्ञात, वह सब वर्णन शास्त्र लिखित।
सर्वज्ञ होते हैं महा वैज्ञानिक, परम ज्ञाता व हितोपदेशक ॥13॥
यह सब वर्णन शास्त्र में निहित, मेरी कृति में भी विस्तृत लिखित।
कनकनन्दी इसे विश्वास करें, शिष्यगणों को भी पाठन करें ॥14॥

टोकर, दि. 16.1.2012, रात्रि 1.27 तथा प्रातः 6.38
(यह कविता आर्यिका धैर्यश्री के अनुरोध से बनी)

साधु तीर्थ, त्रिवेणी स्थल राठौड़ा ग्राम में आचार्यश्री संघ व मुनिसंघ का ऐतिहासिक वात्सल्य मिलन

सप्त साधुओं की जन्म स्थली राठौड़ा ग्राम जो कि अरावली पर्वत शृंखलाओं की गोद में स्थित है; मेवाड़ की त्याग, तपस्या, स्नेह, मधुरता, सज्जनता का प्रतीक है। तीन नदियों का संगम स्थल है, ऐसे त्रिवेणी संगम स्थान में त्रय साधु-संघों का मिलन

अपने-आप में अत्यन्त मनमोहक, आह्लादकारी, प्रेरणादायी, मधुर-स्मृतियों को समाहित करके विविध अनुभवकारी रहा, जिसकी चर्चा जन-जन में व्याप्त रही। प.पू. स्वाध्याय तपस्वी, धर्म-दर्शन-विज्ञान समन्वय का युगीन नवाचार करने वाले आचार्य श्रेष्ठ श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव ससंघ व प.पू. मनोज्ञ मुनि श्री तरुणसागर जी ससंघ व मुनिश्री निरञ्जनसागर जी ससंघ का वात्सल्य मिलन, प्रवचन, चर्चा-वार्ता, स्वरचित ग्रंथों का आदान-प्रदान, आचार्यश्री कृति-प्रकृति (पर्यावरण) गीताञ्जली, ग्रंथांक-203 (धारा-5) का विमोचन आदि कार्यक्रमों से मेवाड़-बागड़ अञ्चल उत्साहित हो उठा; साधु भक्ति में भाव-विभोर हुआ।

इस अवसर पर मुनिश्री तरुणसागर जी ने आचार्यश्री को अपनी आदरांजलि प्रस्तुत करते हुए कहा कि गुरुदेव कनकनन्दी जी ने अपनी प्रज्ञा बुद्धि का सदुपयोग धर्म व विज्ञान को जोड़ने में किया है जो कि स्तुत्य व अभिनन्दनीय है। अपने प्रवचन के माध्यम से परिवार में स्नेह-आदर से रहने की सीख देते हुए कहा कि कम बोलो, काम की बोलो। हित-मित-प्रिय बोलो। इसके पश्चात् आचार्य भगवन्त ने अपनी गहन अनुभवात्मक वाणी के माध्यम से शान्ति-क्रान्ति विज्ञान शिक्षा आदि विषयों पर अपने प्रबोधन से उपस्थित जन समुदाय को चिन्तन व नियम लेने हेतु प्रेरित किया। आचार्यश्री के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का अल्प परिचय मुनि सुविज्ञसागर ने दिया। आचार्यश्री ने देश-विदेश के अनेक महापुरष जैसे आइन्स्टीन, रवीन्द्रनाथ, बाल्मीकि, अङ्गनचोर, अंगुलिमाल आदि के उदाहरण देते हुए कहा कि हर क्रान्ति की शुरुआत स्वयं से होती है। गुरु के

विराट स्वरूप का दर्शन गुरुदेव ने अंग्रेजी के GOD शब्द के माध्यम से कराया। गुरुदेव ने बताया कि गुरु G से जनरेटर अर्थात् ब्रह्मा, O से ऑपरेटर अर्थात् विष्णु तथा D से अज्ञान को नष्ट करने वाला डिस्ट्रायर अर्थात् महेश है। गुरुदेव ने वर्तमान शिक्षा पद्धति की विकृतियों पर प्रकाश डालते हुए भारतीयों की हो रही दुर्दशा व पतन के बारे में विस्तार से बताते हुए कहा अभी आगे पाठ पीछे सपाट की उक्ति चरितार्थ हो रही है जिससे हमारा राष्ट्रीय-सांस्कृतिक-नैतिक पतन तेजी से होता जा रहा है। ऐसी विपरीत परिस्थितियों में भी हम (आचार्यश्री संघ) विज्ञान-शिक्षा-नासा से लेकर इसरों, पीस नेक्स्ट तक कार्य कर रहे हैं। इस लघु ग्राम के श्रावकों ने कम संख्या होते हुए भी इतना बड़ा कार्यक्रम व आगन्तुक अतिथियों के भोजन-निवास आदि की जो व्यवस्था की वह अत्यन्त श्लाघनीय व अनुकरणीय है। सभी ग्रामजन धन्यवाद व आशीर्वाद के पात्र हैं।

(शुभकामनाओं सह-मुनि सुविज्ञसागर, संघस्थ आचार्यश्री कनकनन्दी जी गुरुदेव)।

राठौड़ा प्रवास से, दिनांक 27.12.2011

दिनांक 6.1.2012 से दि. 17.1.2012 तक मिलन-चर्चा-वार्ता-सेवा-स्वाध्याय का सत्र

त्रय आचार्य श्रीसंघों का अपूर्व वात्सल्य मिलन

ग्राम-टोकर (रज़)

शौर्य-स्वाभिमान-मधुरता-गुरुभक्ति-राष्ट्रप्रेम की पुण्य भूमि मेवाड़ अञ्चल के लघु ग्राम टोकर जो कि यहाँ की नयनाभिराम पहाड़ियों व सरोवर के तट पर स्थित है, ऐसे भक्ति ग्राम में प.पू. ग्राम उन्नायक वैज्ञानिक ऋषिवर आचार्य रत्नश्री कनकनन्दी जी गुरुदेव ससंघ, प.पू. आचार्यश्री पद्मनन्दी जी गुरुदेव ससंघ, मुनिश्री अचलनन्दी जी, आर्यिका करूणाश्री माताजी, आ. पवित्रश्री, आ. विजयश्री, आ. धैर्यश्री, आ. प्रशान्तश्री माताजी छुल्लिका कुन्दनश्री माताजी, ब्र. अंजू दीदी, ब्र. अर्चना दीदी, ब्र. कुमार दक्ष। प.पू. आचार्यश्री सुकुमालनन्दी जी गुरुदेव संसघ का वात्सल्य मिलन अपने आप में अनूठा, आह्लादकारी, प्रभावनायुक्त, ऐतिहासिक रहा। प.पू. आचार्यश्री कनकनन्दी जी गुरुदेव ने आगन्तुक सभी साधुओं-साध्वियों से सुख साता पृच्छना, चर्चा-वार्ता-स्वाध्याय-प्रवचन-स्वास्थ्य विषयक मार्गदर्शन योगासन, प्राणायाम, साहित्य प्रदान (स्व रचित) आदि समाचारों के माध्यम से सहयोगात्मक संगठनात्मक सकारात्मक सन्देश व सम्बोधन प्रदान किया, जिससे सभी आनन्दित व लाभान्वित हुए। गुरुदेव के श्रेष्ठ ज्येष्ठ सतत् ज्ञानोपयोगी प्रथम शिक्षा प्राप्त शिष्य प.पू. आचार्यश्री पद्मनन्दी जी गुरुदेव से भी उनके अपने साधनाकाल के विविध अनुभवों से गुरुदेव ने सभी साधु व श्रावक-श्राविकाओं को लाभान्वित कराया। स्वाध्याय व कार्यशाला के माध्यम से वैज्ञानिक गुरुवर ने

ब्रह्माण्डीय विज्ञान, ईकोसिस्टम, पर्यावरण, महास्कन्ध, महाप्रयोग आदि गहन गंभीर विषयों पर अपना विशद विवेचन अपनी स्वरचित गीताञ्जली कृति के माध्यम से अनेक विषयों के अन्तर्संबन्धों को जोड़ते हुए कहा कि धर्म-दर्शन-विज्ञान-पर्यावरण-अनेकान्त आदि विषयों में समन्वय होना समता व शान्ति प्राप्ति करने के लिए युगीन आवश्यकता है। प.पू. आचार्यश्री सुकुमालनन्दी जी को भी पूज्यश्री गुरुदेव ने स्वास्थ्य, अध्ययन व ज्ञान-विज्ञान की उज्ज्वल सम्भावनाओं के सम्बन्ध में प्रबोधन दिया जिससे प्रभावित होकर उन्होंने गुरुदेव के व्यक्तित्व व कृतित्व की सराहना, अनुमोदना करते हुए स्तुत्य भाव प्रदर्शित किया व आचार्यश्री कनकनन्दी जी गुरुदेव रचित कृति ''विविध गीताञ्जली'' (गीताञ्जली धारा.....6) एवं ''आचार्यश्री कनकनन्दी जी गुरुदेव ससंघ की नियमावली'' केलेण्डर इन कृति द्वयों का अपने कर-कमलों से विमोचन किया। अपने दादा गुरु अर्थात् आचार्यश्री कनकनन्दी जी व अपने दीक्षा गुरु आचार्यश्री पद्मनन्दी जी से एक साथ मिलन कर आचार्य सुकुमालनन्दी जी अत्यन्त प्रसन्नता व धन्यता का अनुभव किये जिसे देखकर विभिन्न ग्रामों से आये लोगों ने भाव विभोर होकर त्रय आचार्य श्रीसंघ के दर्शन, प्रवचन व आत्मीय मिलन का अपूर्व लाभ प्राप्त किया। पूज्यश्री कनकनन्दी जी गुरुदेव की त्रययोग (मन-वचन-काय), त्रिभक्ति (सिद्धभक्ति, श्रुतभक्ति, आचार्यभक्ति) व त्रय परिक्रमा देकर वन्दना भक्ति सभी साधुओं ने की, जिसे देखकर जन-गण-मन अभिभूत हुआ।

शुभाकांक्षा सह-मुनि सुविज्ञसागर, संघस्थ आचार्यश्री कनकनन्दी जी गुरुदेव।